श्री रत्नप्रभाकर ज्ञानपुष्पमाला पुष्प नं० ५१

श्री रत्नप्रभासूरि सद्गुरुभ्यो नमः

अथ श्री

शीघ्रबोध

अथवा

थोकड़ा प्रबन्ध

भाग १५ वां

संग्राहक —

श्रीमदुपकेश (कमला) गच्छीय मुनि
श्रीज्ञानसुन्दरजी (गयवरचन्दजी)

प्रकाशक —
शाहा हीरचन्दजी फूलचंदजी कोचर
मु० फलोधी (मारवाड़)

प्रथमा वृत्ति १००० वीर संवत् २४४८
विक्रम सं० १९७८

'जैन विजय' प्रेस—सूरतमें मूलचंद किसनदास कापडियाने
मुद्रित किया।

प्रस्तावना ।

प्यारे वाचक वृन्दों ।

शीघ्रबोध भाग १-२-३-४-५-६-७-८-९-१०-११-१२-१३-१४ आप लोगोंकि सेवामें पहुंच चुका है। आज यह १५ वां भाग आपके कर कमलोंमें ही उपस्थित है। इन्ही १५ वा भागके अन्दर पूर्व महाऋषियों स्वआत्म-कल्याण और पर आत्मावोंपर उपकार करनेके लिये तथा आत्मसत्ता प्रगट करनेवाले महात्वके प्रश्न तथा प्रश्नोके उत्तर सिद्धान्तोद्धारे शकलित किये थे। उन्होंको सुगमताके साथ हरेक मोक्षाभिलाषीयोंके सुख सुख पूर्वक समझमें आजके इस हेतुसे मूलसूत्रोसे भाषान्तर कर आप कि सेवामे यह लघु किताब भेजी जाती है आशा है कि आप लोग इस आत्म कल्याणमय प्रश्नोत्तर पढ़के पूर्व महाऋषियोंके उद्देशको सफल करोगे शम् ।

ॐ

श्री रत्नप्रभसूरि सद्गुरुभ्योनमः

शीघ्रबोध भाग १९ वां ।

प्रश्नोत्तर नं० १ ।

सूत्र श्री उत्तराध्ययनजी अध्य० २९

(७१ प्रश्नोत्तर)-

आत्म कल्याण करनेवाले भव्यात्मावोंके लिये निम्नलिखत प्रश्नोत्तर बडे ही उपयोगी है वास्ते मौक्तफलके मालाकि माफिक हृदयकमलके अन्दर स्थापित कर प्रतिदिन सुधारस पान करना चाहिये ।

(१) प्रश्न-सवेग (वैराग) ससारका अनित्यपना और मोक्षकि अभिलाषा रखनेवाले जीवोंको क्या फलकि प्राप्ती होती है।

(उत्तर) सवेग (वैराग) कि भावना रखनेसे उत्तम धर्म करनेकि श्रद्धा होगा । उत्तम धर्मकि श्रद्धा होनेपर ससारीके पौद्गलीक सुखोंको अनित्य समझेगा अर्थात परमवैराग्य भावकों प्राप्त होगा । जब अन्तानुबंधी क्रोध मान माया लोभका क्षय करेगा, फिर नये कर्म न बन्धेगा इन्हीसे मिथ्यात्वकि बिलकुल विशुद्धि होगा । जब सम्यक् दर्शनकि आराधना करता हुवा उसी भवमें मोक्ष जावेगा, अगर पेस्तर किसी गतिका आयुष्य बन्ध भी गया हो तो भि तीन भवोंमें तो आवश्यहि मोक्ष जावेगा ।

(२) प्रश्न-निर्वेद (विषय अनाभिलाषा) भाव होनेसे जीवोंको क्या फलकि प्राप्ती होती है ?

(उ०) निर्वेद होनेसे जीव जो देवता मनुष्य और तीर्यंच सम्बन्धी कामभोग है उन्होंसे अनाभिलाषी होता है फिर शब्दादि सर्व कामभोगोंसे निवृति होता है फिर सर्व प्रकारके आरम्भ सारम्भ और परिग्रहका त्याग कर देते है एसा त्याग करते हुवे संसारका मार्गको वीलकुल छेदकर मोक्षका मार्ग पर सीधा चलता हुवा सिद्धपुर पटनकों प्राप्त कर लेता है ।

(३) प्रश्न-धर्म करनेकि पूर्ण श्रद्धावाले जीवोंको क्या फल?

(उ०) धर्म करनेकि पूर्ण श्रद्धावाले जीवोंने पूर्व भवमें साता वेदनिय कर्म किये जिन्होंसे इस भवमें अनेक पौदगलीक-सुख मीला है उन्होंसे विरक्त भाव होते हुवे गृहस्थावासका त्याग कर श्रमण धर्मको स्वीकार कर तप संयमादिसे शरीरी मानसि दुःखोंका छेदन भेदन कर अव्याबाद सुखोंमें लोक अग्र भागपर विराजमान हो जाते है ।

(४) प्रश्न—गुरु महाराज तथा स्वधर्मी भाइयोंकी शुश्रषा पूर्वक सेवा भक्ति करनेसे जीवोंको क्या फल होता है ?

(उ) गुरु महाराज तथा स्वधर्मी भाइयोंकि शुश्रषापूर्वक-सेवा भक्ति करनेसे जीव विनयकि प्रवृतिकों स्वीकार करता है इन्हीसे जो वोध वीजका नाश करनेवाली आसातनाकों मूलसे उखेड देता है अर्थात आसातना नहीं करनेवाला होता है । इन्हींसे दुर्गतिका निरूद्ध होता है तथा गुरु महाराजादिकी गुण कीर्ति करनेसे सद्गति होती है सदगति होनेसे मोक्षमार्ग (ज्ञान-दर्शन चरित्र) कों विशुद्ध करता है और विनय करनेवाला लोकने प्रशंस्या करने लायक होता है सर्व कार्यकि सिद्धि विनयसे होती

स्ते एक भव्यात्माओंको विनय करता हुवा देखके अन्य जीवोंको भी विनय करनेकि रुचि उत्पन्न होती है। अतिम विनय भक्तिका फल है कि जन्मजरा मरणादि रोगोंको क्षय करके मोक्षको प्राप्त कर लेता है।

(५) प्रश्न–लगे हूवे पापकि आलोचना करनेसे जीवोंको क्या फल होता है।

(उ०) लगे हूवे पापकि आलोचना करनेसे जो मोक्षमार्गमें विघ्नमूल और अनन्त ससारकि वृद्धि करनेवाले मायाशल्य, निदानशल्य मिथ्या दर्शनशल्यको मुलसे निष्ट कर देते है। इन्होंसे जीव सरल स्वभावी हो जाते है सरल स्वभावी होनेसे जीव स्त्रिवेद नपुसकवेद नही बन्धे अगर पेहले बन्धा हुवा हो तो निज्जरा (क्षय) कर देते है। वास्ते लगे हुवे पापकि आलोचना करनेमें प्रमाद बिलकुल न करना चाहिये।

(६) प्रश्न–अपने किये हूवे पापकि निंद्या करनेसे क्या फल होता है ?

(उ०) अपने किये हूवे पापकि निंद्या करनेसे जीवोंको पश्चाताप होता है अहो मैंने यह कार्य बूरा किया है। एसा पश्चाताप करनेसे जीव वैराग्य भावको स्वीकार करता है एसा करनेसे जीव अपूर्व गुणश्रेणिका अवलम्बन करते हुवे जीव दर्शन मोहनिय कर्मको नष्ट करता हुवा निज आवास (मोक्ष) में पहुच जाता है।

(७) प्रश्न–अपने किये हूवे पापोंको गुरु महाराजके आगे गुणा करते हूवे जीवोंको क्या फल होता है ?

और दुसरेका बहूमान होता है इन्होंसे जीव कर्मोसे लघुभूत होता है।

(११) प्रश्न–प्रतिक्रमण (चोथावश्यक) करनेसे जीवोंको क्या फल होता है ?

(उ) प्रतिक्रमण करनेसे जो जीवोंके व्रतरूपी नावाके अति· चार रूप हूवा छेद्र उन्हीका निरूद्ध होता है एसा करनासे जीवोंको आश्रव और सवले दोपोंसे निवृतिपना होता है इन्होंसे अष्टप्रवचन कि माता रूपी सयम तपके अन्दर समाधिवान्त पणे विचारे।

(१२) प्रश्न–कायोत्सर्ग (पाचमावश्यक) करनेसे क्या फल होता है ?

(उ) कायोत्सर्ग करनेसे जीव भूत वर्तमान कालके प्रायश्चितको विशुद्ध करता है जैसे भारके वहान करनेवालेका भार उतर जानेसे सुखी होता है वेसे ही प्रायश्चित उतर जानेपर जीव भी सुखी हो जाते है।

(१३) प्रश्न–पचक्खान (छठावश्यक) करनेसे क्या फल होता है।

(उ) पचक्खान करनेसे जीवोंकि इच्छाका निरूद्ध होता है ऐसा होनेसे सर्व द्रव्यसे ममत्वभाव मीट जाता है ममत्व न रहनेसे जीव शीतलीभूत होके सयमके अन्दर समाधिपने विचरता है।

(१४) प्रश्न –'थाइथुइ मगल" चैत्यवन्दन करनेसे क्या फल होता है ?

(उ) चैत्यवन्दन करनेसे जीवोंको बोधबीज रूपि ज्ञान दर्शन चरित्र कि प्राप्ती होती है इन्होंसे अन्त क्रिया करके मोक्ष

पदकी आराधन करते है तथा शेष कर्म रेहजानेपर वैमानिक देवोंमें जाने योग्याराधना होती है वहांसे मनुष्य होके मोक्ष जाता है।

(१५) प्रश्न—काल प्रतिलेखन (प्रतिक्रमण करनेके बाद स्वद्याय करनेके लिये आकाशकि १० अस्वद्यायका प्रतिलेखन) करनेसे क्या फल होता है ?

(उ) कालप्रतिलेखन करनेसे जीवोंके ज्ञानावर्णिय कर्मका क्षय होता है कारण कालप्रतिलेखन करने पर सर्वसाधु सुख पूर्वक सूत्रोंका पठन पाठन कर शक्ता है इन्होंसे ज्ञानपदकी आराधना होती है ?

(१६) प्रश्न—लगे हूवे पापोंका गुरु मुखसे आगमोक्त प्रायश्चित लेनेसे जीवोंको क्या फल होता है ?

(उ) गुरु मुखसे पापोंका प्रयाश्चित लेनेसे पापोंसे विशुद्ध होते हूवे निरातिचार हो जाते हैं इन्हीसे आचार धर्मका आराधिक होते हूवे मोक्ष मार्गकोंनिर्मल करता है।

(१७) प्रश्न—किसी भी जीवोंके साथ अनुचित वर्ताव होने पर उन्हिसे माफी अर्थात् क्षमत्क्षामणा करनेसे जीवोंको क्या फल होना है।

(उ) किसी० सर्व जीवोंसे क्षमत्क्षामणा करनेसे अन्तःकरणसे प्रशस्थ भावना होती है प्रशस्थ भावना होनेसे सर्व प्राण भूत जीव सत्वसे मित्र भावना उत्पन्न होता है इन्होंसे अपने भावोंकि विशुद्धि होती है और सर्व प्रकारके भयसे मुक्त होते हूवे निर्भय होके निज स्थानकों प्राप्त कर लेते हैं।

(१८) प्रश्न-स्वाद्याय (आगमोंकि आवृति) करनेसे क्या फल होता है ?

(उ) स्वाद्याय करनेसे जीवोंका अध्यवशाय ज्ञान रमणतामें रेहते हैं इन्हींसे ज्ञानावर्णिय कर्मका क्षय होता है तथा सर्व दु खोंकि अन्त करनेमें यह सूत्रोंकि स्वद्याय मौल्य कारण मूत है।

(१९) प्रश्न-वाचना सूत्रोंकि वाचना देना तथा वाचना लेनेसे जीवोंको क्या फल होता है ?

(उ) सूत्रोंकि वाचना देनेसे कर्मोंकि निर्ज्जरा होती है और सूत्र धर्मकि अनासातना अर्थात सूत्रोंका बहुमान होता है वाचना देनेसे तीर्थ धर्मका आलम्बन होता है तीर्थ धर्मका आलम्बन करता हूवाजीव कर्मोंकि महान् निर्जरा और ससारका अन्त करता है शासनका आधार ही आगमोंकि वाचना पर रहा हुवा है वाचना देने लेनेसे ही शासन आमोध चल रहा है वास्ते वाचना देने लेनेमें समय मात्रका प्रमाद न करना चाहिये।

(२०) प्रश्न-ज्ञान वृद्धिके लिये तथा शका होनेपर प्रश्न पुच्छने है उन्नीं जीवोंको क्या फल होते है।

(उ) प्रश्न पुच्छनेसे सूत्र अर्थ और सूत्रार्थ विशुद्ध होते हैं और जो शका होनेसे कम्मामोहनिय उत्पन्न हुई थी वह प्रश्न पुच्छनेसे मिट हो जाती है चित्त समाधि होने पर नये नये ज्ञान कि प्राप्ती होती है।

(२१) प्रश्न-सिद्धान्तोंको वारवार पठन पाठन करनेसे क्या फल होता है ?

(उ) सिद्धान्त० विस्मृत हो गये सूत्रार्थ कि स्मृति होती है वारवार पठनपाठन करनेसे अक्षर लब्धि तथा पदानुस्वारणी लब्धियोंकि प्राप्ती होती है ।

(२१) प्रश्न—अनुपेक्षा-सूत्रार्थ पर प्रति समय उपयोग देता हुवा अनुभव ज्ञानकी विचारण करते हूवे जीवोंको क्या फल होता है ।

(उ) अनुपेक्षा—अनुभव ज्ञानसे विचारणमें उपयोग कि प्रवृति होनेसे आयुष्य कार्मकों छोड़के शेष सातों कर्मोका घन प्रबन्ध होतो शीतल करे, दीर्घकालकि स्थितिवाले कर्मोको स्वल्पकालकि स्थितिवाला कर देते हैं, तीव्र रसवाले कार्मोको मंद रस वाला कर देते है वहुत प्रदेशवाले कर्मोकों स्वल्प-प्रदेशवाला करे, आयुष्य कर्म स्यात् बन्धे (वैमानिकका) स्यात् न बन्धे (मोक्ष जावे तो) आसाता वेदनिय वारवार नहीं बन्धे इस आरापार संसार समुद्रको शीघ्र तिरके पारपामें अर्थात् अनुपेक्षा है वह कर्मोके लिये वड़ा भारी शस्त्र है ।

(२३) प्रश्न—श्रोतागणकों धर्म कथा सुनानेसे क्या फल होता है ।

(उ) धर्मकथा केहनेवाला हजारों गमे जीवोंका उद्धार करता है इन्होंसे कर्मो कि महान् निर्ज्जरा होती है और साथहीमें शासनकी प्रभावना होती है इन्सोंसे भविष्यमें अच्छे फलका अस्वादन करता हूवा मोक्ष जावेगा ।

(२४) प्रश्न—सूत्रोंकि आराधना करनेसे क्या फल होता है।

(उ) सुत्रोंकि सेवा भक्ति पुजन पठन पाठन करनेसे जीवोंको जो ससारमें भ्रमन करानेवाला अज्ञान है उन्सोंको निष्ट करता हुवा सर्वप्रकारका कलेसकों करकर आप समाधिमावमें उत्तम स्थान प्राप्त करता है ?

(२५) प्रश्न-श्रुतज्ञान पर एकाग्रमनकों लगा देनेसे क्या फल होता है ।

(उ) श्रुत ज्ञान पर एकाग्र चित्त लगा देनेवालेकों पाप वैपारोंमें जाते हुवे मनका निरूद्ध होता है नये कर्म नहीं बन्धते हैं पूर्व कर्मोंकि निर्ज्जरा होती है भविष्यमें निर्मल ज्ञानकि प्राप्ती होती है ।

(२६) प्रश्न-सत्तरा प्रकारके सयम आराधन करनेसे क्या फल होता है ?

(उ०) सयम (शत्रु मित्र पर सममाव) पालनेसे जीवेंकि आश्रवरूपी नालासे नये कर्म आना बन्ध हो जाता है ।

(२७) प्रश्न-बारह प्रकारके तप करनेसे क्या फल होते हैं ?

(उ०) तपश्चर्य करनेसे जीवोंके पूर्व कालमें सचय किये हूवे कर्मोंका क्षय होता है कारण तप है वह इच्छाका निरूद्ध करना है और इच्छाका निरूद्ध करना वहा ही कर्मोकी निर्जर है

(२८) प्रश्न-पुराणा कर्मोका क्षय होनेसे जीवोंको क्या फल होता है ?

(उ०) पुराणा कर्मोका क्षय होनेसे जीवोंकि अन्त क्रिया होती है अन्तीम क्रिया होनेसे जीव अनन्तकालकि जो कर्मोंसे भीत थी उन्हीको तोटके मोक्षमें पधार जाते है ।

(२९) प्रश्न—सुखशय्यामें सयन करनेसे क्या फल होता है।

(उ०) सुख शय्यापर सयन करनेसे जीवोंकि जो चंचलता चपलता अधीर्यता आतुरतादि प्रकृतियों है इन्होंका निष्ट होजाता है इन्होंसे कोमलताभाव होजाते है तब पर जीवोंको दुखी देखते ही कम्पा होती है और सुख शय्याका सेवन करनेसे शोक रूपी दुश्मनका नाश होता है इन्हीसे चारित्र मोहनीय कर्म मूलसे चला जाता है तब सुख शय्याके अंदर चरित्र धर्मसे रमणता करता हुवा श्रेणीका अवलम्बन करके शिव मन्दिर पर पहुंच जाते है।

(३०) प्रश्न—अप्रतिबंद्ध (गृहस्तादिका परिचयत्याग) होनेसे क्या फल होता है।

(उ०) अप्रतिबंध होनेसे निःसंग (संगरहित) होजाता है निःसंग होनेसे चित्तका एकाग्रपणा रेहता है चित्तका एकाग्रपणा रेहनेसे राग द्वेष तथा इन्द्रियोंकी विषयका तीरस्कार होता है एसा होनेसे जीव आनन्दचित्तसे स्वकार्यसाधन करता हुवा अप्रतिबन्धपणे विचरे ?

(३१) प्रश्न—पशु नपुंसक स्त्रियों रहित मकानमें रेहनेसे क्या फल होता है।

(उ०) एसा मकानमें रेहनेसे चरित्रकी गुप्ती अच्छी तरहेसे पल शकती है और विगई आदिसे त्याग करनेकी इच्छा होती है

---

१ श्री स्थानायांग सूत्रके चतुर्थ स्थानेमे च्यार सुख शय्या है।

(१) निग्रन्थके वचनोंमें शंका कक्षा न करना।

(२) काम भोगकि अभिलापा रहित होना।

(३) शरीरकि शुश्रुपा विभूषा न करना।

(४) आहार पानीकि शुद्ध गवेषना करना।

इन्होंसे ब्रह्मचर्य व्रतकी विशुद्धता करते हुवे जीव अष्ट कर्मोकी गठीको छेदके मोक्ष जाते है ?

(३२) प्रश्न–विषय कषायसे विरक्त होनेसे क्या फल होता है ?

(उ०) विषय कषायसे विरक्त होनेसे जीव पाप कर्म नहीं करते है इन्होंसे अध्यवशाय रूपी शस्त्र तीक्ष होते है । इन्होंसे च्यारगतिरूप विष वेलीकों तत्काल छेदके संसारसे विमुक्त हो जाते हैं ।

(३३) प्रश्न–संभोग=साधुवोंके तथा साध्वियोंके आपसमें वस्त्रपात्र वाचना आहार पाणी आदि लेने देनेका संभोग होता है उन्होका त्याग करनेसे जीवोंको क्या फल होता है ।

(उ०) संभोगका त्याग करनेसे जीव अवलम्बन (आसा) का क्षय करता है अर्थात संभोग होनेसे एक दूसरेकी साहिताकी आसा करते है और त्याग करनेसे आप निरालम्बन होजाते है । निरालम्बन होनासे अपनी स्व सत्तापर ही कार्य करनेमें पुरुषार्थ करते है और अपना ही लाममें संतुष्ट रेहते हुवे दुसरी सुख शय्याका आराधन करते हुवे सिंहकी माफीक विचरे ।

(३४) प्रश्न–औपधिवस्त्र पात्रादिका त्याग करनेसे क्या फल होता है ।

(उ) औपधिके त्याग करनेसे "अपलिमंथ" अर्थात औपधि है वह संयमका पलिमंथ है कारण औपधि रखनेसे उन्होंको देखना संरक्षन करनादि अनेक विकल्प करना पडता है इन्होंसे निवृति

होनेसे शीतोष्ण कालमें किसी कीस्मकि तृष्णा नहीं रहेती है इन्होंसे आनन्द मगलसे संयम यात्रा निर्वाहा शक्ते है ।

(३९) प्रश्न—सदोष आहारपाणीका त्याग करनेसे क्या फल होता है ?

(उ) सदोष आहारादिका त्याग करनेसे जिन्ही जीवोंके शरीरसे आहार बनता था उन्ही जीवोंकी अनुकम्पाको स्वीकार करता हूवा अपने जीवनेकी आसाका परित्याग करते हूवे जो आहार संबन्धी क्लेश था उन्होंसे भी निवृति होके सुख समाधीके अन्दर रमणंता होती है ।

(७६) प्रश्न—कषाय (क्रोधादि)का त्याग करनेसे क्या फल होता है ?

(उ) कषायका त्याग करनेसे जीव निर्कषाय अर्थात् वीतराग भावी होजाता है वीतरागी होनासे सुख और दुःखको सम्यक् प्रकारे जानता हूवा अकषाय स्थानपर पहूंच जाता है ।

(३७) प्रश्न—योगों (मन वचन कायके वैपार)का त्याग करनेसे क्या फल होता है ?

(उ) योगोंका त्याग करनेसे जीव अयोगावस्थाको स्वीकार करता है अयोगी होनेपर नवा कर्म नहीं बन्धते है चवदमें गुण- स्थान अयोगीगुणश्रेणीपर छडने हूवे पूर्व कर्मोकी निर्जरा कर शीघ्र ही मोक्षमें जाते है ।

(३८) प्रश्न—शरीर (तेजस कार्मणादि)का त्याग करनेसे क्या फल होता है ।

(उ) तेजस कार्मण शरीर जीवोंकि अनादिकालसे साथ ही लगे हुवे हैं और मोक्ष जाने समये ही इन्होंका त्याग होते हैं वास्ते तेजस कार्मण शरीरका त्याग करनेसे सिद्ध अतिश्यको प्राप्त करते हूवे लोकके अग्र भाग पर जाके विराजमान होजाते है अर्थात् अशरीरी होजाते है।

(३९) प्रश्न–शिष्यादिकि साहिताका त्याग करनेसे क्या फल होता है ?

(उ०) साहिता लेना (इच्छा) यह एक कमजोरी ही है वास्ते साहिताका त्याग करनेसे जीव एकत्व पणाको प्राप्त करते है एकत्व होनेसे जीवको काम क्रोध कलेश शब्दादि नही होना है स्वसत्ता प्रगट हो जाती है इन्होंसे तप सयम सवर ज्ञान ध्यान् समाधि आदिमें विध्न नही होता है निर्विध्नता पूवक आत्म कार्यको साधन कर शक्ता है।

(४०) प्रश्न–भात पाणी (सथारा) का त्याग करनेसे क्या फल होता है ?

(उ०) आलोचना करके समाधि सहित भात पाणीका त्याग करनेसे जीवोंके जो अनादि कालसे च्यारों गतिमें परिभ्रमण करानेवाले भव थे उन्होंकि स्थितिका छेदन करते हूवे ससारका अन्त कर देता है।

(४१) प्रश्न–स्वभाव (अनादि कालसे अठारे पाप सेवनरूप प्रवृतिका त्याग करनेसे क्या फल होता है ?

(उ०) स्वभावका त्याग करनेसे अठारे पापसे निवृत्ति हो जाती है इन्होंसे जीवोंको सर्व व्रतीरूप स्वपणतिमें रमणता होती

है इन्होंसे जीव शुक्लध्यान रूपी अपूर्व कारण गुणस्थानका आव-लम्बन करते हुए च्यार घनघाती (ज्ञानावर्णिय, दर्शनवर्णिय, मोह-निय, अन्तराय कर्म) कर्मोंका क्षय कर प्रधान केवल ज्ञान प्राप्त कर मोक्षमें जाता है।

(४२) प्रश्न—प्रतिरूप—श्रद्धायुक्त साधुके लिंग रजो हरण मुखवस्त्रादि धारण करनेसे क्या फल होता है।

(उ०) साधु लिंग धारण करनेसे द्रव्ये आरंभ सारंभ समारंभ तथा परिग्रह आदि अनेक कलेशोंका खजांना जो संसारिक बन्धनसे मुक्त होता है भावसे अप्रतिबंध विहार करते हुवे राग द्वेष कषाय विषयादिसे विमुक्त होता है जब लघुभूत (हलका) होके अप्रमतगजपर आरूढ होके माया शल्यादिको उन्मुल करते हुवे अनेकोगम जीवोंका उद्धार करते है कारण साधुका लिंग जग जीवोंको विसवासका भाजन है और कर्म कटकका नाश करनेमें मुनिपद साधक है समिती गुप्ती तपश्चर्य ब्रह्मचर्य आदि धर्म कार्य निर्विध्नतासे साधन हो सक्ते है इन्होसे स्वपर आत्मावोंका कल्याण कर परंपरा मोक्षमे जाते है।

(४३) प्रश्न—व्ययावच्च—चतुर्विध संघकि व्ययावच्च करनेसे क्या फल होता है।

(उ) चतुर्विध संघकि व्ययावच्च करनेसे=तीर्थकर नाम गौत्र उपार्जन करते हैं कारण व्ययावच्च करनेसे दुसरे जीवोंको समाधी होती है शासनकि प्रभावना होति है भवान्तरमें यश कीर्ति शरीर सुन्दर मजबुत संहननकी प्राप्ती होती है यावत् तीर्थ पद भोगवके मोक्षमे जाते है।

(४४) प्रश्न–ज्ञानादि सर्व गुण सपन्न होनेसे क्या फल होता है ?

(उ) ज्ञानादि सर्वगुण सपन्न होनेसे फिर दुसरी दफे ससारमें जन्म मरण न करे अर्थात शरीरी मान्सी दु खोंका अ त कर मोक्षमें जावे।

(४५) प्रश्न– राग द्वेष रहित (वीतराग) होनेसे क्या फल होता है।

(उ०) राग द्वेष रहित होनेसे धन धान्य पुत्र कलत्र शरीर आदि पर मस्नेह दूर हो जाता है तब शब्द रूप गन्ध रस स्पर्श इन्द्रोंके अच्छे होने पर राग नहीं बुरे होने पर द्वेष नहीं उत्पन्न होते है अर्थात अच्छा और बुरे निंदा और स्तुतिसर्व पर शमभाव हो जते है।

(४६) प्रश्न–क्षमा करनेसे जीवोंकों क्या फल होता हैं।

(उ) क्षमा करनेसे जीवोंके परिसह रूप जो महान् शत्रु है उन्होंको क्षमा रूपी कवच (शस्त्र)से पराजय कर देता है पराजय करनेसे स्वपर आत्मावोंका शीघ्र कल्याण होता है। शान्ति करनेके लिये यह एक परम औषधी है।

(४७) प्रश्न–निर्लोभता रखनेसे क्या फल होता है।

(उ) निर्लोभता रखनेसे अकिंचन भाव होता है इन्होंसे जो जीवोंके आकाश प्रदेशकि माफीक अननी तृष्णा लग रही है उन्हों कों शांत कर देता है।

(४८) प्रश्न मर्दव (कोमलता) गुण प्राप्त होनेसे क्या फल होता है।

(उ०) कोमलता होनेसे जीव मान रहित होता है मान
रहित होनेपर उद्धतता दूर होती है इन्होंसे जीव अष्ट प्रकारे जो दम
है उन्होंसे हमेश दुर रेहता है इसीसे भवान्तरमें उच्च जाति कुलमें
उत्पन्न होता हुवा सम्यक् ज्ञानादिकों प्राप्ती कर स्वकार्य साधन
करेता हुवा विचरेगा ।

(४९) प्रश्न–अर्जव–माया रहीत होनेसे जीवोंकों क्या
फल होता है ।

(उ०) मायारहित होनेसे भावका सरल भाषाका सरल
कायाका सरलपना होता है इन्होंसे योग (मनवचनकाया) अवि
संवाद (समाधि) पने रेहता है एसा होनेसे त्रिवेद नपुमक वेद
नही बन्धता है । भवान्तरमें सम्यक्त्वकी प्राप्ती होते ही कर्म
शल्यको निकाल अवस्थित स्थान स्वीकार करेगा ।

(५०) प्रश्न–भाव सत्य होनेसे जीवोंको क्या फल होता है।

(उ०) भाव सत्य होनेसे जीवोंका अन्तःकरण विशुद्ध होता
है अन्तःकरण विशुद्ध प्रवृति करते हूवे अरिहंत धर्मका आराधन
करनेकों सावधान होगा एसे होनेसे भवान्तरमें भी चरित्र धर्मका
आराधीक होगा ।

(५१) प्रश्न-करण सत्य होनेसे क्या फल होता है ?

(उ०) करण सत्य होनेसे जीव जेसे मुहसे केहते है वेसाही
कार्य करके वतला देते है जेसे प्रतिलेखनादि क्रिया कहे उसी
मुताबीक करते भी है ।

(५२) प्रश्न–योग सत्य होनेसे जीवोंकों क्या फल होता है।

(उ०) योग (मनवचनकाया) सत्य होनेसे जीवोंके योगोंकि

विशुद्धता होती है विशुद्ध योगोंसे प्रशस्थ क्रिया करने हूने चारित्र धर्मकि आराधना होती है।

(९३) प्रश्न–मनको पापोंसे गुप्त रखनासे क्या फल होता है?

(उ०) मनको पापोंसे गुप्त रखनेसे मनका एकत्वपना होता है मनका एकत्वापना होनेसे जो मन सबंधी पाप आता था वह रूक जाया और मनोगुप्तीरूप जो सयम था उन्होंका आराधीक होता है।

(९४) प्रश्न–वचनगुप्ती रखनेसे क्या फल होता है?

(उ०) वचनकि गुप्ती रखनेसे जो च्यार प्रकारकि विकथा करनेसे पाप आता था उन्होंको रोक दीया और वचनसे जो करने योग ज्ञान ध्यान पठनपाठन स्वध्यायदि कार्यका आराधीक होता है।

(९५) प्रश्न–कायगुप्ती करनेसे क्या फल होता है?

(उ०) कायागुप्ती रखनेसे जो काया अयत्नासे हलन चलनादिसे आते हूने आश्रवको रोक देता है और विनय व्यवच्च आसन ध्यानदि कायासे करने योग सयम क्रियाका आराधीक होता है?

(९६) प्रश्न–मनके सकल्प विकल्पको धीटाके एकान्त निश्चल ध्यानादि सत्य कार्यमें स्थापन करनेसे क्या फल होता है।

(उ०) मनको० एकत्वता होती है एकत्वता होनेसे अनुभव ज्ञानपर्यव निर्मल होता है ज्ञानसे जो अनादि कालके मिथ्यात्व पर्यव था उन्होंका नाश होता है पणा होनेसे विशुद्ध दर्शनकि प्राप्ती होती है।

(९७) प्रश्न–वचन–सावद्य कर्कश आदि दोष रहीत स्वध्या-

यादिके अन्दर स्थापन करनेसे क्या फल होता हैं ?

(उ०) वचन० मर्यादाको जनने वाला होता है मर्यादाकों जाननेसे जीवदर्शनकों विशुद्ध करता है । दर्सन विशुद्ध होनेसे दुर्लभपनेका नास करता हुवा सुलभ बोधीपना उपार्जन करता है ।

(५८) प्रश्न-कायाके अयत्न आदि दोषोंको दुर कर वस्त्रादिकमे स्थापन करनेसे क्या फल होता है ।

(उ०) काया० इन्होंसे चरित्र पर्यवकों विशुद्ध करता है चरित्र पर्यव विशुद्ध होनेसे जीव यथाक्षात चरित्रकि आराधना करते है इन्होंसे वेदनियकर्म आयुष्यकर्म नामकर्म गोत्रकर्मकों क्षय कर मोक्ष जाता है ।

(५९) प्रश्न-अज्ञानकों नष्टकर ज्ञाम संपन्न होनेसे क्या फल होता है ?

(उ०) ज्ञानसंपन्न होनेसे जीव जीवादि पदार्थकों यथावत् समझे यथावत् समझनेसे जीव संसार भ्रमनका नास करे जेसे सूतके डोरा सहित सुइ होनेसे फीरसे हस्तगत हो शक्ती हैं इसी माफीक ज्ञान सहित जीव कभी संसारमे रेहता होतों भी कभी मोक्ष जाशकता है । अर्थात् ज्ञानवन्त जीव संसारमें विनास पांमे नहीं और ज्ञानसे विनय व्ययावच्च तप संयम समाधी क्षमादि अनेक गुणोंकी प्राप्ती ज्ञानसे होती है ज्ञानी स्वसमय पर समयका ज्ञाता होनेसे अनेक भव्य जीवोंका उद्धार कर शक्ता है ।

(६०) प्रश्न-मिथ्यात्वका नास करनेसे-दर्शन संपन्न होता है इन्होंको क्या फल होता है ।

(४०) दर्शन सपन्न होनेसे जीव जो ससार परि भ्रमनका मूल कारण अन्तानुबधी क्रोधमान माया लोभ और मिथ्यात्व मोहनिय हैं उन्होंका मूलसे ही उच्छेद कर देता है एसा करते हुये च्यार धन घाती कर्मोका नाश करते हुवे केवल ज्ञानदर्शनको उपार्जन करते हैं तब लोकालोकके भावोंको हस्तामलकी माफिक देखता हुवा विचरता है।

(६१) प्रश्न–अव्रतका नाश करके चरित्र सपन्न होता है उन्होंका क्या फल होता है।

(उ०) चरित्र (यथाक्षात) सपन्न होनेसे जीव शलेसीकरण वाला चौदवा गुणस्थानको स्वीकार करता है चौदवा गुणस्थानको स्वीकार करते हुवे अत क्रिया करके जीव सिद्ध पदकी प्राप्ती कर लेते हैं।

(६२) प्रश्न–श्रोतेन्द्रियकों अपने कबजेमें करलेनेसे क्या फल होता है।

(उ) श्रोतेन्द्रियकों अपने कबजेमें करलेनेसे अच्छा और बुरा शब्द श्रवण करनेसे रागद्वेषजो कर्मोका बीज है उन्होंकी उत्पती नही होती है इहोंसे नये कर्मोका बन्ध नही होता है पुराणे बन्धे हुवे कर्मोकी निर्जरा होती है।

(६३) प्रश्न–चक्षु इन्द्रिय अपने कबजे करलेसे क्या फल होता है।

(उ) चक्षु इन्द्रिय अपने कबजे करनेसे अच्छे और बुरे रूप देखनेसे राग द्वेष न होगा। इन्हीसे नये कर्म न बधेगा और पुराणे बन्धे हुवे हैं उन्होंकि निर्जरा होगा।

(६४) प्रश्न—घ्रणेन्द्रिय अपने कबजेमें रखनेसे क्या फल होता है।

(उ) घ्रणेन्द्रिय अपने कबजेमें रखनेसे अच्छे और बुरे गन्ध पर राग द्वेष उत्पन्न न होगा इन्हीसे नये कर्म न बन्धेगा और जो पुराणा बन्धा हुवा कर्म है उन्होंकि निर्ज्जरा होगा।

(६५) प्रश्न—रसेन्द्रिय अपने कबजे करनेसे क्या फल होगा।

(उ) रसेन्द्रिय अपने कबजे करनेसे अच्छे और बुरे स्वाद पर राग द्वेष न होगा—इन्होंसे नये कर्म न बन्धेगा पुराणे बन्धे हुवे कर्मोंकी निर्ज्जरा करेगा।

(६६) प्रश्न—स्पर्शेंद्रिय अपने कबजे करनेसे क्या फल होगा।

(उ) स्पर्शेंद्रिय अपने कबजे रखनेसे अच्छे और बुरे स्पर्श पर राग द्वेष न होगा इन्होंसे नये कर्म न बन्धेगा पुराणे बन्धे हुवे कर्म है उन्होंकी निर्ज्जरा होगा।

(६७) प्रश्न—क्रोध पर विजय करनेसे क्या फल होता है।

(उ) क्रोधपर विजय अर्थात क्रोधको जितलेनेसे जीवोंको क्षमा गुणकि प्राप्ती होती है इन्होंसे क्रोधावरणीय * कर्मका नया बन्ध नही होता है पुरणे बन्धे हुवे कर्मोंकी निर्ज्जरा होती है।

(६८) मानपर विजय करनेसे क्या फल होता है।

(उ) मानको जित लेनेसे जीवोंको मर्द्दव (कोमलताविनय) गुणकि प्राप्ती होती हैं इन्होंसे मानावरणीय कर्मका नया बन्ध न होगा पुराण बन्धा हूवा है उन्होंकि निर्ज्जरा होगा।

---

*क्रोध मान माया और लोभ यह मोहनीय कर्मकि प्रकृति है वास्ते क्रोधावरणीय केहनेसे मोहनिय कर्म ही समझना एवं मान माया लोभ।

(६९) प्रश्न–मायाकी विजय करनेसे क्या फल होता है ।

(उ) मायाकों जितलेनेसे जीवोंको सरलता निष्कपट भावोंकी प्राप्ती होती है इन्होंसे मायावरणीय नये कर्मोकी वन्ध नही होता है और पुरणे बन्धे हूवे कर्मोंका निर्जरा होती हैं ।

(७०) प्रश्न–लोभका विजय करनेसे क्या फल होता है ।

(उ) लोभ जित लेनेसे जीवोंकों निर्लोभता गुणकि प्राप्ती होती है इन्होंसे लोभावरणीय कमका नये बन्ध न होगा पुरणे बन्धे हूवे कर्मकी निर्जरा होगी ।

(७१) प्रश्न–रागद्वेष और मिथ्यात्वशल्यका परित्याग करनेसे क्या फल होता है ।

(उ०) रागद्वेष मिथ्यात्वशल्यका त्याग करनेसे जीव ज्ञानदर्शन चरित्रकि आराधना करनेको सावधान होता है ऐसा होनेसे जो अष्टकर्मोकि गठी है उन्होको छेदन भेदन करनेको तैयार होता है जिस्मे भी प्रथम मोहनिय कर्मकि अटावीस प्रकृति है इन्होंकि घात करता है बादमें ज्ञानावर्णीय कर्मकी पाच प्रकृती और दर्शनवर्णिय कर्मका नव प्रकृति और अन्तराय कर्मकि पाच प्रकृति इन्हीं च्यार घन घातीये कर्मोंको नास कर देता है इन्हीं च्यारों कर्मोंका नास (क्षय) करनेसे अनुत्तर प्रधान जिस्के आवरण नहीं है यह भी आनेके बाद फिर जाता नहीं है वेसा उत्तम केवल ज्ञानको प्राप्त कर लेते हैं तब सयोग केवली होते है उन्होंको सपराय कर्मका बंध नही होता है परन्तु इरिया वही कर्म प्रथम समय बंध दुसरे समय वेदना तीसरे समय निर्जर हो एस दो समय वाल कर्मोका बन्द होता है फीर चौदवे गुणस्थान

जाने पर जीव कर्मोका अबन्धक हो जाते है ।

(७२) प्रश्न–अबन्धक होनेसे जीवोंका क्या फल होता है ?

(उ०) अबन्धक होनेसे अर्थात् अन्तर महूर्त आयुष्य रहनेसे योगोंका निरूद्ध करते हुवे सुक्षम क्रियासे निवृत्ति और शुक्ल ध्यानके चोथे पायेका ध्यान करते हुवे प्रथम मनोयोगका निरूद्ध पीच्छे वचन योगका निरूद्ध पीच्छे काय योगका निरूद्ध करके पांच ह्रस्वाक्षर " अ इ उ ऋ ऌ " का उच्चारण कालमें समुत्सम क्रियाका निरूद्ध और शुक्ल ध्यानके अंदर वर्त्तते आयुष्य कर्म वेदनिय कर्म नामकर्म गोत्रकर्म इन्हीं च्यारों कर्मोको संयुग क्षयकर देता है ।

(७३) प्रश्न–चारों अघातीये कर्मोका क्षय करनेसे क्या फल होता है ?

(उ०) च्यारों अघातीये कर्मोका क्षय करनेसे जीव जो अनादि कालका संयोग वाला तेजस कारमण और औदारीक यह तीनों शरीरको छोडके शमश्रेणी प्राप्त अस्पर्श प्रदेश उर्द्ध एक समय अविग्रहगतिसे ज्ञानके साकारोपयोग संयुक्त सिद्ध क्षेत्रमें अनन्ते अव्याबाध सुखोंमें विराजमान हो जाते है ।

यह ७३ प्रश्नोत्तर भव्यात्मावोंके कण्ठस्थ करनेके लिये विस्तार नही करते हूवे मूल सुत्रसे संक्षेपार्थ ही लिखा है अधिक अभिलाषा रखने वाले आत्म बन्धुओंको गुरुमुखसे यह अध्ययन अवश्य श्रवण करना चाहिये । इत्यलम् ।

सेवं भंते सेवं भंते तमेव सच्चम् ।

प्रश्नोत्तर न० २

सूत्र श्री उत्तराध्ययनजी अध्य० ९

(श्री नमिराज ऋषि)

प्रत्येक बुद्धि नमिराजाकि कथा विस्तारसे है परन्तु हमारेको यहांपर प्रश्नोत्तर ही लिखना है वास्ते संक्षिप्त परिचय करा देना उचित समझा गया है यथा-मिथिलानगरीका नरेश नमिराजके शरीरमें दाह ज्वर होजानेसे पतिकी भक्तिके लिये १००८ राणी-यो बावनाचन्दनको घसके अपने स्वामिके शरीरपर शीतल लेपन कर रही थी उसी समय सब राणयोंके हाथमें रत्नोंके कंकणोंकी झणकार (अवाज) राजाको नागवार गुजरने पर हुकुम दे दीया कि यह अवाज मुझे अधिक तकलीफ दे रही है तब सब राणीयोंने अपने स्वामिका हुकुम होनेपर मात्र एकेक चुडी रखके शेष सर्व खोलके रखदी इतनेमें खणकार बन्ध होनेसे राजाने पुछा कि क्या अब वह झनकार नहीं है राणीयोंने कहा स्वामिनाथ हमने शोभा-ग्यके लिये एकेक चूडी ही रखी है इतनेमें तो नमिराजाको यह ज्ञान हुवा कि बहुत मीलने पर ही दुःख होता है अलम् अपनेको एकेला ही रेहना चाहिये यह एकत्व भावना करते ही जाति स्मरण ज्ञान होगया आप परमयोगीराजा होके मिथिला नगरीको छोड बगीचेमें जाके ध्यानारूढ होगये ।

उन्ही समय प्रथम स्वर्गके सौधर्मेन्द्रने अवधिज्ञानसे देखा कि एकदम बगेर किसीके उपदेश नमिराजने योग धारण किया है तो चलो इन्होंकि परिक्षा तो करे । तब इन्द्रने ब्रह्मणका रूप धारण करके नमिराज ऋषिके पास आया और प्रश्न करता हुवा ।

(१) प्रश्न—हे नमिराज यह प्रत्यक्ष देवलोक सादस मिथिलानगरीके म्हेल (प्रासाद) और सामान्य घरोंके अन्दर बडा भारी कोलाहल शब्द हो रहा है अर्थात् आपके योग लेनेपर इन्ही लोकोकों कीतना दुःख हुवा है तो आपको इन्ही लोकोंका रक्षण करना चाहिये क्युकि यह सब लोक आपके ही आश्रत रहे हुवे हैं।

(उत्तर) हे ब्रह्मण—यह सब लोक अपने स्वार्थके लिये ही कोलाहाळ शब्द कर रहे है न कि मेरे लिये। जेसे इस मिथिला नगरीके बाहर एक अच्छा सुन्दर पुष्प पत्र फल शाखा प्रति साखासे विस्तारवाला वृक्ष है उन्हों कि शीतल सुगन्धी छाया और मधुर फल होनेसे अनेक द्विपद चतुष्पद और आकाशके उडनेवाले पक्षी आनन्दमें उन्हीं वृक्षकि निश्रायमें रहते थे। किसी समय अति वेगके वायु चलनेपर वह वृक्ष तूट पडा उन्ही तूटे हूवे वृक्षकों देखके वह आश्रत जीव एकदम रौद्र आक्रन्दसे कोलाह करने लग गये अब सोचिये वह जीव अपने सुखके लिये दुःख करते है या वृक्ष तुट पडा उन्हीको तकलीफ हूइ उन्होंके लिये दुःख करता है। कहेना ही होगा कि वह जीव अपने ही स्वार्थके लिये रूदन करते हैं इसी माफीक मथिला नगरीके जनसमुह रूदन करते हैं वह अपने स्वार्थके लिये ही करते हैं तों मुजे भी मेरा स्वार्थ साधना चाहियें उन्ही असास्वते परीवारकों अपना मानना ही वडी भूलकि वात है वास्ते मेरी नगरी आदि नहीं है म्हे एकेला ही हूं।

(१) हे योगीन्द्र–आपकि मिथिला नगरीके अन्दर प्रचण्ड दावानल (अग्नि) प्रज्वलित हो रही है उसमें गढ मढ म्हेल प्रासाद और सामान्य जनोंके घर जल रहे है तो आप सामने क्यु नही जोते है अर्थात् आपके नेत्रोंमें बडी शीतलता रही हूई है कि आपके देखनेसे अग्नि शात हो जाती है (मोहनिय कर्मकि परिक्षका प्रश्न है)

(उ) हे भूतपि–म्हे सुखसे सयमयात्रा कर रहा हू मेरा कुच्छ भी नही जलता है । कारण जिन्होने राजपाट धन धान्य स्त्रियों आदिका परित्याग कर योग धारण किया हो उन्हीकों किसी प्रकारकि ससारसे ममत्व भाव नही है तो फिर जलनेकि चिंता ही क्यों हों और मेरा जो ज्ञानदर्शनादि धन है उन्होंके जलानेवाली अग्नि समान्य कषाय है उन्हीकों तों मैं प्रथम ही मेरे कब्जामें कर ली है वास्ते म्हे निर्भय होके सुख सयम यात्रा कर रहा हू ।

(२) प्रश्न–हे मुनीद्र आप दीक्षा लेना चाहते हो परन्तु पेस्तर नगरके गढ पोल भुगल दरवाजे बुरजो पर तोपो शस्त्रादिसे पका बन्धोवस्त करके फीर योग लो कि आपके राजका पूर्ण परिपालन आपके पुत्र ठीक तौरसे कर शकेगा ।

(३) हे जगदेव–मेने मेरा नगरका खुब मजबुत जाबता कर लिया है यथातत्वश्रधन रूप मेरे नगर है तपश्चर्य बाह्या भित्तर रुप कीमाड है सवर रूप भोगल है क्षमा रूपीगढ शुभ मनोयोगरूप कोट, शुभ वचन योग रूपी बुरजो, शुभ काययोगका मोरचा बंधा हुवा है, प्राक्रमकी धनुष्य, इर्या समतिकि जीवा

धीर्यताकी पाणच, सत्यताका कवच, (शस्त्र) अप्रमाद रूपी गन्वहस्ती, ज्ञान रूपी अश्व, अष्टादश शिलांगरथ धारी युक्त रथ, अध्यवशाय अन्तःकरण भावना रूपी बाणोंसे भरा हूवे रथोंको देखके कोई भी दुस्मन मेरे पास नहीं आशक्ता है। हे भूऋषि मोहनरेन्द्रकि शैन्याको चकचुरकरदी है तो अम कोनसा दुस्मन मेर रहा है ? हे भूऋषि असार संसारके अस्थिर पदार्थोंके लिये सग्राम करनेको मुनि हमेशा दुर ही रेहते है परन्तु भाव सग्राम कर्म शत्रुवोंको पराजय करनेके लिये हमेशा तैयार रहते है ।

(४) प्रश्न-हे जितेन्द्र-इस दुनियोंके अंदर एक समान्य मनुष्य भी अपने जीवनमें एकेक नाम्वरीके कार्य करते है तो आप तो महान् राजेश्वर हो वास्ते आपको इस अक्षय पृथ्वीपर अच्छा सुंदर सीखर बंध झाली झरोखे वाला प्रासाद (म्हेल) जोकि आपके पुत्रादिके क्रीडा करने योग्य एसा मकान बानके एक बडा भारी नाम कर । हे क्षत्री फीर आपको दीक्षा लेना उचित है ?

(उ०) हे ब्रह्मदेव-जिन्होंको रस्तेमें ठेरना हो वह मकान कराते है म्हैतो इन्ही मकानोंको छोडा है और इच्छित मकान (मोक्ष-शिव मंदिर) में जाके ठेरूगा, हे ब्रह्मण मकान बनानेसे ही नाम्वरि नहीं होती है यह तो बाल क्रीडावत् मकान और नाम्वरी है परन्तु जो मकान और नाम्वरी अक्षय है उन्होंको प्राप्त करनेकि कोषीस करना यह वडी भारी नाम्वरी है वास्ते मुजे मकान बनानेकि जरुरत नहीं है मेरे तो इच्छित मकान बना हुवा तैयार है वहा हीजाके म्है ठेरूंगा ।

(५) प्रश्न-हे क्षमावीर-आपके नगरीकों उपद्रव्य करनेवाले तस्कर चौर लुटेरा वटपाडा दगावाज आदि अनेक है उन्हींकों अपने कब्जामे कर फीर योग लेना ?

(उत्तर) हे भव्य-संसारकी उल्टी चाल है जो माव चौर (विषयकषाय) है उन्हीकों तों निज धन चौरानेमें साहिता करते है और जो द्रव्य चौरकि अपनि वस्तुवोंकों नहीं चौरानेवाल है उन्हीकों पकड केदकर देते है परन्तु म्हे एसा नही हु कि जों चौर नही है उन्हीकों पकडनेमें मेरा अमूल्य समय खोदु म्हे तों मेरे असली मालके चौरानेवाले (विषय कषाय) चौरोंकों मेरे अधिन कर लिया है अब मेरा धन चाहे चाहेचौकमें क्युं न पडा रहे मुजे भय है ही नही अर्थात् निर्भय होके मेरा धनका रक्षण करता हूं।

(६) प्रश्न-आत्मवीर-आपके वेरी भूमि या अन्य राजा जो कि अभी तक आपकि आज्ञा नही मानि है आपको नमस्कार नही कीया है उन्हीकों संग्राम द्वारा पराजय कर अपने अधिन बनाके फीर दीक्षालो ताके पीछे आपके पुत्रादिको कोई तरह कि तकलीफ न हो ?

(उ०) हे रौद्राक्ष धारक-जो हजारकों हजार गुण करनेसे दशलक्ष होते है इतने सुभटोंकों पराजय करलेना दुष्कर नही है परन्तु एक अपनि आत्मापर विजय करना बहुत ही दुष्कर है जिन्ही पुरषोंने एक आत्माको जीतली हो तो फीर दुसरोंकि लिये संग्राम करने कि क्या जरूरत है मैंनेतों ज्ञान आत्मासे अज्ञानाकों भगा दीया है और दर्शनात्मासे मोहोकों अपने कब्जे कर लिया

है बस सब वैरी भूमिया दुस्मनों मेरी आज्ञांमे ही वर्तते है वास्ते मुजे संग्राम करने कि कोई भी जरूरत नहीं है ।

(७) प्रश्न-हे राजन्–आपने उच्च कुलमे अवतार लिया है तो भवान्तरेमे अच्छे मोक्ष सुखके देनेवाला एक 'यज्ञ' करावो और श्रमणशाक्यादि तापसोंकों और ब्रह्मणोंकों भोजन करवाके दक्षिणा देके फीर योग लेना ।

(उ०) हे भूऋषि–प्राणीयोंके वद्धरूप जो 'यज्ञ' कराणातो दुनीयोंमें प्रगट ही अकृत्य है कारण यज्ञमें तो गज अश्व माता पिता बकरादिका बलीदान किया जाता है इन्ही घोर हिंस्यासे तो जीवोंकि दुर्गति ही होती है अच्छे मनुष्योंकों यह कृत्य करने लायक ही नहीं है । और एसे यज्ञ कर्मके करनेवाले श्रमण शाक्यादिकों भोजन कराना यह भी यज्ञ कर्मकों उतेजित करता है और संसारीक भोग भोगवना यह विष समान फल देनेवाला है यह तुमारा केहना बीलकुल अयोग है हे ब्रह्मण तुही विचार यह संयम कितने उच्च कोटीका है अगर कोई मनुष्य प्रतिमास दश दश लक्ष गायोंका दान दे तथा सुवर्णमय पृथ्वीका भी दान देता है । उन्होंसे भी सयम अधिक फलवाला है । कारण संयम पालने वाला तो दश लक्ष क्या परन्तु सर्व जगत् जन्तुवोंकों अभयदान दिया है वास्ते सर्व प्रशंसनीय संयम ही है उन्हीकों अंगीकार करते हुवे सर्व जीवोंको अभय दान देता हूवा भाव यज्ञ करता हूवा म्है आत्म सुखोंका ही अनुभव कर रहा हूं ।

(८) प्रश्न–है धराधीश–गृहस्थाश्रम ब्रह्मचार्याश्रम भीक्षावृत्या-श्रम और वनवासाश्रम यह च्याराश्रमके अन्दर गृहस्थाश्रम ही

उत्तम है कारण शेषाश्रमको आधारभूत है तों गृहस्थाश्रम ही है। परन्तु गृहस्थाश्रमका निर्वाह करना बडा ही दुष्कर है कायर पुरुषोंसे गृहस्थाश्रम चलना बड़ा ही मुशकल है गृहस्थाश्रमें तों सुरवीर धीर पुरुषोंसे ही चल शक्ता है। हे नरनाथ दीक्षा तों प्रगट ही कायरता बतला रही है कि भिक्षावृत्तिसे आजीवका करना इतना ही नही बल्के स्वपानी लोकोंकों भी निंद्या करनेयोग है वास्ते तुमारे जेसा वीर पुरुषोंकों तों गृहस्थाश्रम हीमें रहेके पौषद आदि करना योग्य है ?

(उत्तर) हे भूऋपि गृहस्थाश्रम है वह सर्व सावद्य (पाप वेपार सहित) है और जिन्होंकि यह श्रद्धा है कि दीक्षासे भी गृहस्थाश्रम अच्छा है उन्होंको जो गृहस्थाश्रममें रेहकर मासमासोपवास करके कुशाग्र भाग इतना भोजन करते हूवे भी 'सयम' के शीलमें भागमे नही आशक्ते हैं कारण सयम निर्वद्य है और गृहस्थाश्रम सावद्य हैं वास्ते वीर पुरुषोंकों सयम ही स्वीकार करने योग्य है और मोक्षरूपी फलका दातार ही संयम है नकि गृहस्थाश्रम।

(९) प्रश्न-हे नराधिप-अगर आपकों दीक्षा ही लेना हो तो पेस्तर आपके खजानामे मणिमाणक मौक्ताफल चन्द्रकन्तामणि कासी ताबा पीतल वस्त्रभूपण और शेयके अन्दर गज अश्व मुगट आदि सर्व भरपुर भरके फीर दीक्षा लो।

(उत्तर) हे लोभानन्द-इन्ही मणिमौक्ता फलादिसे कीसी प्रकारकि तृप्ती नही होती है जेसे कीसी लोभी मनुष्यकों एक

सुवर्णमय मेरूपर्वत बनाके दे देवे तथा सर्व पृथ्वी सुवर्णमय करके दे देवे तो भी उन्ही लोभी पुरुषकी तृष्णा कभी शान्त न होगी कारण लौकमे द्रव्य तों असंख्याता है और जीवोंकी तृष्णा आकाशसे भी अनन्त है। हे—ब्रह्मदेव केवल धनही नहीं बल्के इन्ही आरापार पृथ्वीकों सुवर्णकि बनाके अन्दर शालीगोधम जवज्वार कांसी सुवर्ण चान्दी आदि लोभानन्दको देदी जावे तों भी शान्त होना असंभव है परन्तु ज्ञानी पुरुषों तो इन्हीं नाश भय तृष्णाको एक महान् दुःखका खजाना समझके परीत्याग किया है वह ही परम सुख विलासी हुआ है वास्ते मुजे खजाना भरनेकि जरूर नहीं है। मेरा खजाना भरा हूवा है।

(१०) प्रश्न हे भोगेन्द्र यह प्रत्यक्ष भोग विलास राज अन्तेवर (स्त्रियों) आदि सब देवतोंके माफीक ऋद्धि आपको मीली है इन्होंको तो आप त्याग न करते है और भवांतरमें अधिक सुखोंकि अभिलाषा रखते है यह ठीक नहीं है अगर आगे न मीलने पर आपको और संकल्प विकल्प तो करना न पडेगा यह भी विचार आपको पेहला करना चाहिये। अर्थात् यह मीले हूवे काम भोगको भोगवो फिर दीक्षा लेना तांके दोनों भोगोंको अधिकारी बना सकेंगे।

(उत्तर) हे विप्र—यह मनुष्य संबन्धी काम भोग देखनेमे सुन्दर देखाइ देता है परन्तु परिणामसे शल्य सादृश है विष सादृश है आसीविषसर्प सादृश है किंपाकके फल सादृश है भोग भोगवति बखत अच्छा लगता है परन्तु जब उन्हों भोगसे कर्म बन्धा है वह उदयमे होता है तब महान् दुःख नरक निगोदमे

भोगवना पडता है गरवीण मात्तसुखा, बहुकालदु खा " भोग भोगवना तोदुरा रहा परन्तु भोगोंकि अभिलाषा करनेवालोंको भी नरकादि अधोगति होती है। हे विप्र यह नासमान सडन पडन विध्व श्रन जिन्होंका धर्म है एसा काम भोग जगतमें क्रोधमान माया लोम प्रेम कलेशका मूल स्थान है पूर्व महाऋषियों इन्ही काम भोगोंका बडा भारी तीरस्कार किया है। सत्पुरुषोंकि आचारने योग नहीं है वास्ते इन्हीं भोगोंको भुजग समझके ही मैंने परित्याग किया है।

इन्ही दश प्रश्नोंद्धार सौधर्मेन्द्र ब्राह्मणके रूपमें 'नमिराज-ऋषि' कि पारक्षा करी परन्तु आत्माके एक प्रदेश मात्रमें क्षोभ करनेको असमर्थ हुवा तब इन्द्रने उपयोगसे द्रढ धर्मी समझके इन्द्रने अपना असलीरूप बनाके महात्मा नमिराजऋषिको वन्दन नमस्कार करके बोलता हूवा—हे महा भाग्य आपने निज दुस्मन क्रोधमान माया लोमादिकों ठीक कब्जे कर रखा है। हे धीरवीर आपने अपना क्षान्त दान्त आर्जव मार्दव च्यारों महासुभटोंको पासमे रखके मोक्षगढ पहूचनेकि ठीक तैयारी कर रखी है इत्यादि अनेक स्तुतियों करते हुवे इन्द्र अपना मन मुगट और जलहलते कुडल सहीत अपना शिर मुनिश्रीके चरणकमलोंमें झुकाके नमस्कार करके बोलता हूवा। हे भगवान आप इस लोकमें भी उत्तम पुरुष हो कि इने भोगोंको त्याग कर योग लीया है और परलोकमें भी आप उत्तम होंगे कि 'इस ससारका अन्त कर मोक्ष जावोंगे। हे प्रभो आप जगत रक्षण दीनबन्धु भवतारक स्वपरात्म उद्धारक हों। आपके स्तवनादि करनसे भव्या-त्माओंका कल्याण होता है इसी माफीक इन्द्र अपना जन्म पवित्र

करते हूवे मुनि बन्दन कर आकाश मार्ग गमन करते हूवा श्रीनमिराजऋषि प्रत्यक बुद्धि तप संयमादि आराधन कर जन्म जरा मरण रोग शोक मीटाके अन्तिम श्वासोश्वासकों छोड़के लोकाग्रामागमे सास्वता सुखोंमें विराजमान हो गये । शम्
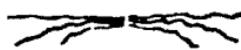
प्रश्नोत्तर नम्बर ३

सूत्र श्री उत्तराध्ययनजी अध्य० २३

(केशी गौतमके प्रश्नोत्तर)

तेवीसवा तीर्थंकर श्री पार्श्वनाथजीके संतानीक अनेकगुणालंकृत अवधिज्ञान संयुक्त केशीश्रमण भगवान बहूतसे शिष्यमंडलके परिवारसे भूमंडलकों पवित्र करते हुवे सावत्थी नगरीके तंदुकवन उद्यानमें समौसरन करता हूवा अर्थात् उद्यानमे पधारे ।

चरम तीर्थंकर भगवान वीर प्रभुके जेष्ट शिष्य इन्द्रभूति "गौतमस्वामि" अनगार अनेक गुणोंलंकृत च्यारज्ञान चौदा पूर्व धारक बहुतसे शिष्यमंडलके परिवारसे पृथ्वीमंडलकों पवित्र करते हूवे सावत्थी नगरीके कोष्टक नामके उद्यानमें समौसरण करते हूवे–ठेर है–

दोनों महापुरुषोंके शिष्य समुदाय बड़े ही भद्रक और विनयवान जैसे शालके वृक्षके परिवार भी शालका ही होते है । एक समय दोनों भगवन्तोंके शिष्य एकत्र होनेसे यह शंका उत्पन्न हुई कि श्री पार्श्वनाथ प्रभु और श्री वीर भगवान दोनों परमेश्वरोंने एकही कारण (मोक्षका) यह धर्म फरमाया हे तों फीर यह प्रत्यक्षमें इतना तफावत क्युं जो कि पार्श्वनाथ प्रभुके शिष्योंके च्यार महाव्रत

रूपी धर्म और पाचों वर्णके वस्त्र वह भी अपरिमित तथा स्वल्प या बहु मूल्यके भी रक्षशक्ते हैं और भगवान वीर प्रभुके सतानोंक पांच महाव्रतरूपी धर्म तथा मात्र श्वेतवर्णके वस्त्र वह भि परिमीत परिमाण और स्वल्प मूल्यके रखते हैं इस शकाका समाधानके लिये अपने अपने गुरु महाराजके पास आके निवेदन किया—भगवान गौतमस्वामिने पार्श्वनाथजीके सतानकोजष्ट (बडे) समझके आप अपने शिष्यमडलको साथ लेके आप तदुक वनमें आने लगे कि जहा पर केशीश्रमण भगवान विराजते थे।

उन्ही समय बहुतसे अन्यमति लोक भी एकत्र हो गये कि आज जैनोंके आपसमें क्या चर्चा होगा और इन्ही दोनोंकि अन्दर सच्चा कौन है। मनुष्य तो क्या परन्तु आकाशमें गमन करते हुये विद्याधर और देवता भी अदृष्टरूपसे आकाशमें चर्चा सुननेको उपस्थित हो गये।

इदर भगवान गौतमस्वामिको आते हुवे देखके केशीश्रमण भगवान अपने शिष्यमडलको लेके सामने गये और बड़ेही आदर सत्कारसे अपने स्थानपर ले आये और पंच प्रकारके तृणोंका आसन गौतमस्वामिको बेठनेक लिये तैयार किया तत्पश्चित् केशीश्रमण और गौतमस्वामि दोनों महाऋषि एक ही तख्तपर विराजमान हुये, जेसे आकाशके अन्दर सुर्य और चन्द्र शोभनिक होते हैं इसी माफीक केशीगौतम शोभने लगे।

सभा चतुर्विधमय, देवता, विद्याधर, और अन्यमति लोकोंसे चकचकच भराई गई थी और लोक राह देख रहे थे कि अब क्या चर्चा होगा। वह एक चित्तसे ही सुनना चाहिये।

केशीश्रमण भगवान मधुर स्वरसे बोले कि। हे महाभाग्य ! अगर आपकी इच्छा हो तो म्है आपसे कुछ प्रश्न पूछना चाहाता हूं ?

गौतमस्वामि विनयपूर्वक बोले कि–हे भगवान। मेरे पर अनुग्रह करावे अर्थात् आपकि इच्छा हो वह प्रश्न पुछनेकी कृपा करे।

(१) केशीश्रमण भगवानने प्रश्न किया कि हे गौतम ! पार्श्वप्रभु और वीरभगवान दोनोंने एक ही मोक्षके लिये यह धर्म रस्ता दीक्षा) बतलाते हुवे पार्श्वप्रभु च्यार महाव्रत रूपी धर्म और वीरभगवान पांच महाव्रतरूपी धर्म वतलाया है तो क्या इस्मे आपकों आश्चर्य नहीं होता हैं।

(उ०) गौतम स्वामि नम्रता पूर्वक बोलते हुवो कि हे भगवान् ! पहेला तीर्थंकर श्री आदिनाथ भगवान्के मुनि सरल (माया रहीत) थे किन्तु पहेले न देखनेसे मुनियोंका आचार व्यवहारको समझना ही दुष्कर था परन्तु प्रज्ञावान् होनेसे समझनेके वाद आचारमें प्रवृत्ति करना बहुत ही सहेज था और चरम तीर्थंकर वीरभगवान्के मुनि प्रथम तो जडवत् होनेसे समझना ही दुष्कर और वक्र होनेसे समझे हुवेकों भी पालन करना अति दुष्कर है वास्ते इन्ही दोनों भगवान्के मुनियोंके लिये पांच महाव्रतरूपी धर्म कहा है और शेष २२ तीर्थंकरोंके मुनि प्रज्ञावान होनेसे अच्छी तरहसे समझ भी सकते है और सरल होनेसे परिपूर्णाचारकों पालन भी कर सकते थे वास्ते इन्ही २२ भगवान्के मुनियोंके लिये च्यार महाव्रत रूपी धर्म कहा है। पांच महाव्रत केहनेसे स्त्रि चोथ व्रतमें और परिग्रह धन धान्यादि पांचमें व्रतमें गीना है परन्तु प्रज्ञावान्त समझ सकते है कि जब

किसी पदार्थ पर ममत्व भाव नहीं रखना तो फिर स्त्रिमें ममत्व आवका एक सीसर बन्ध प्रासाद ही है वास्ते स्त्रिकों और परिग्रहकों एक ही व्रतमें माना गया है। हे भगवान् इसमें किंचत् ही आश्चर्यकि वात नहीं है दोनों भगवानोंका धेय तो एक ही है। यह उत्तर श्रवण करके परिषदाकों बड़ा ही संतोष हुवा था।

यह उत्तर श्रवण करके भगवान् केशीश्रमण बोले कि हे गौतम इस शंकाका समाधान आपने अच्छा किया परन्तु एक प्रश्न मुझे और भी पुच्छना है।

गौतमस्वामिने कहा कि भगवान आप अवश्य कृपा करावे।

(२) हे गौतम श्रीपार्श्वप्रभुने साधुवोंकि लिये 'सचेल' वस्त्र सहित रहना यह भी पांचों वरणके स्वरूप वह बहु मूल्य अपरिमितमर्यादावाले वस्त्र रखना कहा है और भगवान वीरप्रभुने 'अचेल' वस्त्र रहित अर्थात् जीर्ण वस्त्र वह भी श्वेत वर्ण और स्वल्प मूल्यवाला रखना कहा है इसका क्या कारण है?

(उत्तर) हे भगवान् मुनियोंकों वस्त्रादि धर्मोपकरण रखनेकी आज्ञा फरमाई है इसमें प्रथम तो साधुलिंग है यह वरतने जीवोंको विश्वासका भाजन है और लिंग होनासे भव्यात्मावों धर्मपर श्रद्धा रखते हुवे स्वात्म कल्याण कर सकते हैं दुसरा मुनियोंकी चितवृत्ति कबी अस्थिर भी हो जावे तो भी ख्याल रहेगा कि मैं साधु हुं दीक्षतहुं यह अतिचारादि दुसे सेवन करने योग नहीं है अर्थात् अतिचारादि लगाते हुवे लिंग देखके रूक जावेगा। वास्ते यह धर्म उपकरण संयमके साधक है इसमें पार्श्वप्रभुके

संतान सरल और प्रज्ञावन्त होनेसे उन्होंकों किसी भी पदार्थ पर ममत्व भाव नही है और वीरभगवान्के मुनि जड़ और वक्र होनेसे उन्होंके लिये उक्त कायदा रखा गया है परन्तु दोनोंका धेय, एक ही है कि धर्मोपकरण मोक्षमार्ग साधन करनेमें साहिताभुत ज्ञानके ही रखा जाता है ।

केशीश्रमण-हे गौतम आपने इस शंकाका अच्छा समाधान किया परन्तु और भी मुझे प्रश्न करना है । परिषदा भी श्रवण करके बड़े ही आनन्दकों प्राप्त हूई है ।

गौतम-हे भगवान आप कृपा करके फरमाइये ।

(३) हे गौतम ! इस संसार चक्रवालमें हजारों दुस्मनों हैं उन्ही दुस्मनों (वैरी) के अन्दर आप निवास किस प्रकारसे करते है और वह दुस्मन आपके सन्मुख युद्ध करनेकों बराबर आते हुवे और हुमला करते हुवे कि आप दरकार नही रखते हुवे भी दुस्मनोंकों केसे पराजय करते हुवे विचरते हो ।

(उ०) हे भगवान-जो दुस्मन है वह सर्व मेरे जाने हुवे है इन्ही दुस्मनोंका एक नायक है उन्हीकों म्है मेरे कब्जेमें प्रथमसे ही कर रखा है और उन्ही नायकके च्यार उमराव है वह तो हमेंशके लिये मेरे दाश ही बन रहे हैं और उन्ही नायकके राजमें पांच पंच है वह मेरे आज्ञाकारी ही है इन्ही दुस्मनोंमें यह १-४-५=१० मुख्य योद्धा है इन्हीकों अपने कब्जेमें कर लेनेसे पीछे विचारे दुसरे दुस्मन तो उठके बोलने समर्थ भी काहासे हो वे इस वास्ते म्है इन्ही दुस्मनोंका पराजय करता हुवा सुखपुर्वक आनन्दमें विचरता हु ।

(प्र०) हे गौतम—आपके दुस्मन=एक नायक च्यार उमराव पाच पच कोन हैं और कीसकों पराजय कीया है ?

(उ०) हे भगवान्—दुस्मनोंका नायक एक 'मन' है यह आत्माका निज गुणकों हरण करता है इन्हीको अपने कब्जे कर लेनेसे 'मन' के च्यार उमराव क्रोध मान माया और लोभ यह मेरे आज्ञाकारी बन गये है जब इन्ही पाचोकों आज्ञाकारी बना लिये तब हीसे पाच पच 'पाच इन्द्रिय' है उन्होंका सहजमें पराजय कर लिया, बस इन्ही १० योद्धोंकों जीत लेनेसे सर्व दुस्मन अपने आदेशमें हो गये है वास्ते म्है दुस्मनोंके अन्दर निर्भय विचरता हूं।

यह उत्तर श्रवण करने पर देवता विद्याधर और मनुष्योंकों बड़ा ही आनन्द हुवा है और भगवान् केशीश्रमण बोलते हुवे—है प्रज्ञावन्त आपने मेरा प्रश्नका अच्छा युक्तिपूर्वक उत्तर दीया परन्तु मुझे एक प्रश्न और भी करना है ?

गौतम—हे महाभाग्य आप अनुग्रह कर अवश्य फरमावे।

(४) प्रश्न—हे गौतम—इस आरापार ससारके अन्दर बहुतसे जीव निबड़ बन्धनरूपी पासमें बन्धे हुवे दृष्टीगोचर हो रहे है तो आप इस पाससे मुक्त होंके वायुकि माफिक अप्रतिबन्ध केसे विहार करते हो ?

(उ०) हे भगवान्—यह पास बडी भारी है परन्तु म्है एक तीक्षण धारावाला शस्त्रके उपायसे इन्ही पासकों छेदभेद कर मुक्त हुवा अप्रतिबन्ध विहार करता हूं।

(प्र०) हे गौतम आपके कोनसी पास और कोनसे शस्त्रसे दी है ?

(उ०) हे महाभाग्य—इन्ही घोर संसारके अन्दर रागद्वेष पुत्र कलीत्र धनधान्यरूपी जबरजस्त पास है उन्हीकों जैन शासनके न्याय और सदागम भावोंकि शुद्ध श्रद्धना अर्थात् सम्यग्दर्शनरूपी तीक्षण धारावाले शस्त्रसे उन्ही पासकों छेदन भेदन कर मुक्त हूवा आनन्दमे विचर रहा हु । अर्थात रागद्वेष मोहरूपी पासकों तोड-नेके लिये सदागमका श्रवण और सम्यग् श्रद्धनारूप सम्यग्दर्शन-रूपी शस्त्र हे इन्हीके जरियेपाससे मुक्त हो शक्ता है ।

हे गौतम—आप तों बड़े ही प्रज्ञावान हो और यह प्रश्नका उत्तर अच्छी युक्तिसे कहके मेरा संशयको ठीक समाधान किया परन्तु एक और भी प्रश्न पुच्छता हुं।

गौतम—हे भगवान् मेरे पर अनुग्रह करावे ।

(५) प्रश्न—हे भाग्यशाली ! जीवोंके हृदयमें एक विषवेल्हि होती है जिन्होंके फल विषमय होता है उन्ही फलोंका अस्वादन करते हुवे जगत् जीव भयंकार दुःखके भाजन हो जाते हैं, तो हे गौतम आपने उन्हीं विष वेल्हिको मूलसे केसे उखेडके दूर कर, केसे अमृतपान करते हो ?

(उ०) हे भगवान् ! म्है उन्हीं विषवेल्हिकों एक तीक्षण कुदा-लेसे जड़ा मूलसे उखेड दी, अब उन्ही विषमय फलका भय न रखता हूवा जैन शासनमें न्यायपूर्वक मार्गका अवलम्बन करता हुवा विचरता हु ।

(प्र०) हे गौतम आपके कोनसी विषवेल्हि और कोनसा कुदालसे उखडके दुर करी है ?

- (उ०) हे केशीश्रमण–इन्ही घोर ससारके अन्दर रहे हुवे अज्ञानी जीवोंके हृदयमें तृष्णारूपी विषवेछि है वहवेछि भवभ्रमण-रूपी विष्मय फल देनेवाली है परन्तु म्हे सतोषरूपी तीक्षण धारावाग कुदालासे जडा मूलसे नष्ट करके जैन शासनके न्याय माफीक निर्भय होके विचरता हु।

(६) प्रश्न–हे गौतम–इस रौद्र ससारके अन्दर प्राणीयोंके हृदय और रामरोमके अन्दर भयकर जाज्वलामान अग्नि प्रज्वलीत होती हुई प्राणीयोंको मूलसे जला देती है, तों हे गौतम आप इस ज्वलत अग्निकों शान्त करते हुवे केसे विचरते है।

(उ०) हे भगवान्! यह कोपित अग्नि पर म्हे महामेघ धाराके जलको छाटके बीलकुल शान्त करके उन्ही अग्निसे निर्भय विचरता हु।

- (प्र०) हे गौतम आपके कोनसी अग्नि और कोनसा जल है?

(उ०) हे भगवान्–कषायरूपी अग्नि अज्ञानी प्राणीयोंको जला रही है परन्तु तीर्थकररूपी महामेघके अन्दरसे सदागम रूपी मूशलधारा जलसे सिंचन करके बीलकुल शान्त करते हुवे म्हे निर्भय विचरता हु।

(७) प्रश्न–हे गौतम–एक महा भयक्र रौद्र दुष्ट दिशाविदशामें उन्मार्ग चलनेवाला अश्व जगतके प्राणीयोंको स्वइच्छीत स्थानपर ले जाते है तो हे गौतम आप भी ऐसे अश्वपरारूढ होने पर भी आपकों उन्मार्ग नही ले जाते हुवा भी तुमारी मरजी माफीक अश्व चलता है इसका क्या कारण है?

(उ०) हे भगवान्! उन्ही अश्वका स्वभाव तो रौद्र भयंकार और दुष्ट ही है और अज्ञान प्राणीयोंको उन्मार्गमें लेजाके बहा

ही दुःखी बना देते है परन्तु मैं उन्हीं अश्वके मुहमें एक जबरदस्त लगाम और गलेमें एक बड़ा रस्सा डाल दिया है कि जिन्होंसे सिवाय मेरी इच्छाके कीसी भी उन्मार्ग बीलकुल जा भी नहीं सकता है अर्थात् मेरी इच्छानुसार ही चलता है ।

(प्र) हे गौतम आपके अश्व कौन और लगाम रस्सा कौनसा है ?

(उ) हे भगवान ! इस लोकमें बड़ा साहसीक रौद्र उन्मार्ग चलनेवाला 'मन' रूपी दुष्टाश्व है यह अज्ञानी जीवोंको स्वइच्छा घुमाये करता है परन्तु मैंने धर्मशिक्षण रूपी लगाम और शुभ ध्यान रूपी रस्साले गलेके अपने कब्जे कर लिया है कि अब किसी प्रकारके उन्मार्गादिका भय नहीं रखते हुवा मैं आनन्दमें विचरता हुं । हे भगवान, आपने अच्छी युक्तिसे यह उत्तर दिया है परन्तु एक प्रश्न मुझे और भी पुछना है ! परिषदाको बड़ा ही आनन्द होता है ।

गौतम-हे दयाल कृपाकर फरमावे ।

(८) हे गौतम इस लोकके अन्दर अनेक कुपन्थ (खराब मार्ग) और बहुतसे जीव अच्छे रहस्तेका त्याग कर कुपन्थको स्वीकार करते है । उन्हीसे अनेक शरीरी मानसी तकलीफो उठाते है तो हे गौतम आप इन्ही कुपंथसे बचके सन्मार्ग पर कीस तरहे चलते हो ।

(उ) हे भगवान-इस लोकके अन्दर जीतने सन्मार्ग और उन्मार्ग है वह सर्व मेरे जाने हुवे है अर्थात सुपंथ कुपन्थको मैं ठीक ठीक जानता हु इसी वास्ते कुपन्थका त्यागकर सुपन्थ पर आनंदसे चलता हु ।

(प्र) हे गौतम इस लोकमें कोनसा अच्छा और बुरा रस्ता है ?

(उ) हे महाभाग्य–इसी लोकमें अनेक मत्त मत्तांतर स्वच्छंद निज्मति कल्पना इन्द्रियपोषक स्वार्थवृत्तिसे तत्वके अज्ञात लोकोंने पथ चलाये है अर्थात ३६३ पाषाडोंके चलाये हुवे रहस्तेकों कुपन्थ कहेते है और सर्वज्ञ भगवान निस्पृहीतासे जगतोद्धारके लिये तत्वज्ञानमय रस्ता बतलाया है वह सुपथ है वास्ते मैं कुपन्थका त्याग करता हुवा सुदर सदबोध दाता सुपन्थ पर ही चलता हुवा आत्मरमणता कर रहा हु ।

हे गौतम यह उत्तर आपने ठीक युक्तिद्वार प्रकाश कीया परन्तु एक और भी प्रश्न मुझे पुच्छनेका है ।

हे क्षमा गुणालकृत भगवान फरमावों ?

(८) हे गौतम–इस घोर ससारके अन्दर महा पाणीका वेगके अदर बहुतसे पामर प्राणीयों मृत्युकों प्राप्त होते है तो इन्हीकों सरणाभुत एसा कोई द्विपकों आप जानते हो ?

(उ) हे भगवान–इन्ही पाणीके महा वेगसे बचानेके लिये एक बडा भारी वीस्तारवाला और शौम्य प्रकृति सुदराकर महा द्विपा है । वहा पर पाणीका वेग कभी नही आता है उन्ही द्विपाका आवलम्बन करते हुवे जीवोंकों पाणीका वेग सबन्धी कीसी प्रकारका भय नही होता है ?

(प्र) हे गौतम वह कोनसा द्विपा ओर पाणी है ?

(उ) हे भगवान इस रौद्र ससारार्णवमे जन्म जरा मृत्यु रोग शोक आदि रूपी पाणीका महा वेग है इस्में अनेक प्राणीयों

शरीरी मानसी दुःखका अनुभव कर रहे है। जिस्में एक सुन्दर विशाल अनेक गुणागर धर्म नामका द्विप है अगर पाणीका वेगके दुःख देखते हुवे भी इन्ही धर्मद्विपका अवलम्बन कर ले तो इन्ही दुःखोंसे बच शक्ता है। अर्थात् इस घौर संसारके अन्दर जन्म मृत्यु आदिके दुःखी प्राणीयोंको सुखी बननेके लिये एक धर्महीका अवलम्बन है और धर्महीसे अक्षय सुखकि प्राप्ती होती है।

हे गौतम आपकि प्रज्ञा बहुत अच्छी है। यह उत्तर आपने ठीक दीया परन्तु एक प्रश्न मुझे और भी पुच्छनेका है।

हे कृपासिन्धु आप अवश्य कृपा करावे।

(१०) प्रश्न–हे गौतम–महा समुद्रके अन्दर पाणीका वेग (चक्र) बाडाही जोर शौरसे चलता है उन्हीके अन्दर बहुतसे प्राणीयों डुबके मृत्यु सरण हो जाते है और उन्ही समुद्रके अन्दर निवास करते हुये, आप नावापरारूढ हो केसे समुद्रों तीर रहे हो।

(उ०) हे भगवान् उन्ही समुद्रके अन्दर नवा दो प्रकारकि है (१) छेद्र सहित कि जिन्होंके अन्दर वेठनेसे लोक सुमुद्रमें डुब मरते है (२) छेद्र रहीत कि जिन्होंके अन्दर वेठके आनन्दके साथ समुद्रकों तिर सकते है।

(प्र०) हे गौतम–कोनसा समुद्र और कोनसी आपके नावा है?

(उ०) हे भगवान–संसार रूपी महा समुद्र है। जिस्मे औदारीक शरीर रूपी नावा है परन्तु नावामें आश्रवद्वाररूपी छेन्द्र है जो जीव आश्रवद्वार सहित्त शरीर धारण कीया है वहतों संसार समुद्रमें डुब जाता है और आश्रवद्वार रोक दीया है ऐसा

शरीर रूपी नावापरारूढ हुवा है वह ससार समुद्रसे तीरके पार हो जाता है । हे भगवान् म्हे छेद्र रहीत नावापरारूढ होता हुवा ही समुद्रतिर रहा हु ।

हे गौतम यह उत्तर तो आपने ठीक युक्ति सर दीया परन्तु एक प्रश्न मुझे और भी करना है ।

हे स्वामिन् आप कृपा कर फरमावे ।

(११) प्रश्न हे-गौतम इस भयकार ससारके अन्दर घोरोन-घोर अन्धकार फेल रहा है जिसके अन्दर बहुतसे प्राणीयों इदरके उदर धके खाते भ्रमण कर रहे हैं उन्होंको रस्ता तक भी नहीं मीलता है तो हे गौतम इन्ही अन्धकारमें उद्योत कौन करेगा क्या यह बात आप जानते हो ?

(उत्तर) हे भगवान-इन्ही घोर अन्धकारके अन्दर उद्योत करनेवाला एक सूर्य है उन्ही सूर्यके प्रकाश होनेसे अन्धकारका नाश हो जाता है तब उदर इधर भ्रमन करनेवालोको ठीक रस्ता मालम हो जायगा ।

(प्र) हे गौतम-अन्धकार कोनसा और उद्योत करनेवाला सूर्य कोनसा ?

(उ०) हे भगवान इस आरापार लोकके अदर मिथ्यात्वरूपी घोर अधकार है जीस्मे पामर प्राणीयों अन्धा होके इदर उधर भ्रमण करते हैं परन्तु जब तीर्थंकररूपी सूर्य केवलज्ञान रूपी प्रकाशमें भव्यात्मावोंको सम्यग्दर्शन रूप अच्छा सुदर रहस्ता मीलजावेगा उन्ही रहस्तेसे सीधा स्वस्थान पहुच जावेगा । यह उत्तर सुनके देवादि परिषदा प्रश्नचित हो रही थी ।

हे गौतम यह आपने ठीक कहा परन्तु एक और भी प्रश्न मुझे करना है। गौतम—फरमावो भगवान।

(१२) प्रश्न—हे गौतम यह अनादि प्रवाह रूप संसारके अंदर बहुतसे प्राणीयों शरीरी और मानसी दुःखोंसे पिडीत हो रहे है उन्होंके लिये आप कोनसा स्थान मानते हो कि जहांपर पहुंच जानेसे फीर जन्म मरण ज्वाररोग शोककि वेदना बीलकुल ही न होने पावे।

(उ०) हे भगवान इस लोकमें एक एसा भी स्थान है कि जहापर पहुच जानेके बाद किसी भी प्रकारका दुःख नही होता है।

(प्र०) हे गौतम ऐसा कोनसा स्थान है ?

(उ०) हे भगवान—जो लोकके अग्र भागपर जो निवृत्तिपुर (मोक्ष) नामका स्थान है वहां पर सिद्धावस्थामें पहुंच जाने पर किसी प्रकारका जन्म ज्वार मृत्युवादि दुःख नही है अर्थात कर्म-रहित होकर वहा जाते है वास्ते अव्वाबाद सुखोंमें बीराजमान हो जाते है।

केशीस्वामि—हे गौतम आपकि प्रज्ञा बहुत अच्छी है और अच्छी युक्तियों द्वारा आपने यह १२ प्रश्नोंका उत्तर दीया है। परिषदा भी यह १२ प्रश्न सुनके शांत चित्त और वैरागरसका पान करते हुवे जिन शासनकी जयध्वनिके शब्द उच्चारण करते हुवे विसर्ज्जन हुई।

शासनका एक यह भी कायदा है कि जब तीर्थंकरोंका शासन प्रचलित होता है तब पूर्व तीर्थंकरोंके साधु विचरते है वे जबतक

वर्तमान तीर्थंकरोंकि शासनको स्वीकार न करे वहा तक केवलज्ञान होवे, वास्ते भगवान केशीश्रमण पार्श्वप्रभुके सतान थे और इस समय शासन भगवान वीर प्रभुका प्रचलित था वह भगवान केशी-श्रमणको केवलज्ञान प्राप्तकि कोशीषसे वीर प्रभुका शासनको स्वीकार कीया अर्थात् पेहले च्यार महाव्रत रूपी जो धर्म था वहा भगवान गौतमस्वामिके पास पाच महाव्रतरूपी धर्मको स्वीकार करके तप सयममें अपनी आत्माको लगा देनेसे शासन रूपी वृक्ष से केवलज्ञान रूपी फलकी प्राप्ती स्वल्पकालमें ही हो गई थी। भगवान केशीश्रमण केवल पर्याय पालते हुवे चरमश्वासोश्वासका त्याग कर अक्षय सुख रूपी सिद्धपुरपाटनमें अपना स्वराज करने लग गये अर्थात् मोक्ष पधार गये है। इतिशम्।

प्रश्नोत्तर नम्बर ४

सूत्र श्री रायपसेणीजी

(केशीश्रमण और प्रदेशी राजा)

चरम तीर्थंकर भगवान वीरप्रभु अपने शिष्य समुदायसे पृथ्वीमंडलको पवित्र करते हुवे अमलकप्पानगरीके अम्रशाल नामके उद्यानमें पधारे थे। उन्ही समय सुरियाभदेव अपनि ऋद्धि सहित भगवान्को वन्दन करनेको आया था भगवान्को वन्दन नमस्कार करके गौतमादि मुनिवरोंकि आगे भक्ति पूर्वक ३२ प्रकारके नाटक कर स्वस्थान गमन करता हुवा। तत्पश्चित् भगवान् गौतमस्वामिने प्रश्न किया कि हे करूणासिन्धु यह सुरियाभदेव पुर्व भवमें कौनसा कौनसा नगरमें रहता था और क्या

सुकृत कार्य किया कि जिन्होंसे प्रभावके यह देवता संबन्धी महान् ऋद्धि ज्योति क्रन्तीकों प्राप्त हुवा है इस पर भगवान फरमाते हैं कि हे गौतम! एकाग्रचित्त कर सुनो। इन्हीं जम्बुद्वीपके भरतक्षेत्रमें केकइ नामका आद्धा जिनपद देशमें श्वेताम्बिका नामकी नगरी थी धनधान्य मनुष्यों कर अच्छी शोभनिक होनेसे अमरा-पुरकी औपमा दी जाती थी उन्ही नगरीके बाहर मृगवन उद्यान था वह भी वृक्ष लत्ता वेल्हि फल पुष्प और निर्मल जलसे परीपूर्ण भरा हुवा होद वापीकर अच्छा सुन्दर मनोहर था। उन्ही श्वेता म्बिका नगरके अन्दर अधर्मका अन्तेवासी नास्तिक शिरोमणि एसा प्रदेशी नामका राजा था और राजाके सूरिक्रन्ता नामकी राणी थी वह राजाकों परमवल्लभ थी उन्ही राणीके अंग जात और प्रदेशी राजाका पुत्र सूरिकान्त नामका राजकुमर था वह कुमर राजकार्य चलानेमें बड़ा ही कुशल था। राजा प्रदेशीके चित्त नामका प्रधान था। वह च्यारों बुद्धियोंमें बड़ा ही निपुण था और राजके कार्य करनमें अच्छी सलाह देनेमें दुसरे राजावोंके साथ व्यवहार चलानेमें दीर्घदृष्टीवाला था।

एक समय राजा प्रदेशीके सावत्थी नगरीका जयशत्रु राजाके साथ कुच्छ कार्य होनेसे चित्त नामका स्वप्रधानकों बोलाके आदेश करता हुवा कि हे चित्त प्रधान आप सावत्थी नगरीका जयशत्रु राजाके पास जावों और यह भेटणा हमारी तर्फसे देके यह कार्य कर पीच्छे जलदिसे आवों, चित्त नामका प्रधान अपने मालक (राजा) कि आज्ञाकों सविनय शिरपर चडाके राज प्रदेशीके दीये हुवे भेटणोकों और फरमाये हुवे कार्यकों स्वीकार कर अपने स्थान

पर आये स्नान मज्जन कर अच्छे वस्त्र भूषण धारण करके अपने साथ लेने योग्य सुभट रथ आदिकों लेके चित्त प्रधान सावत्थी नगरी गया=सावत्थी नगरीके राजा जयशत्रुने भी प्रधानजीका अच्छा सत्कार किया प्रदेशी राजाका भेटणा आदर पूर्वक स्वीकार करके प्रदेशी राजाके कायमें प्रवृति करने लगा।

सावत्थी नगरीके कोष्टक नाम उद्यानमें श्री पार्श्वप्रभुके चोथे पाट पार विराजते हुवे केशीश्रमण भगवान* अपने शिष्य मंडलके परिवारसे पधारते हुवे, यह खबर नगरीमें होनेसे धर्माभिलाषी पुरुषों महात्मावोंकि सेवाभक्ति और व्याख्यान श्रवण करनेकों आ रहे थे; उन्हीं समय चित्त प्रधान भी इस बातको जानके आप भी केशीश्रमण भगवानके पास पहुंच गये। आये हूवे परिषदा वृन्दकों धर्मकथा कहेते हुवे भगवान केशीश्रमण संसार-का स्वरूप अनित्य दर्शाया और धर्मका महत्व बतलाया, यह धर्म दो प्रकारका है (१) साधु धर्म सर्वव्रती (२) श्रावक धर्म देशव्रती है, भव्य यथाशक्ति धर्मकों स्वीकार कर प्रतिज्ञा पूर्वक आज्ञा पालन करनेसे जीव आराधीक होता है और आराधीक होनेपर अधिकसे

* केशीस्वामि समकालिन दोय हुवे है। गौतमस्वामिके साथ चर्चा करी थी वह केशीश्रमण पार्श्वनाथजीके संतान मुनिपद धारक थे तीन ज्ञान संयुक्त अन्तिम मोक्ष पधारे थे। और प्रदेशी राजाकों प्रतिबोध दिया था वह केशीश्रमण पार्श्वनाथजीके संतान थे परन्तु आचार्य पद धारक च्यार ज्ञान संयुक्त अन्तिम बारहवे देवलोक पधारे थे। वास्ते दोनों केशीश्रमण समकालिन हूवे थे परन्तु है भिन्न भिन्न शास्त्रो द्वारा तथा पार्श्व पटावली द्वारा ऐसा होता है। यहां प्रदेशी राजाको प्रतिबोध करनेवाले केशीश्रमण च्यार ज्ञान संयुक्त पार्श्वनाथजीके चोथे पाट आचार्य थे

अधिक भव करे तो भी १९ भवोंसे ज्यादा नही करे इत्यादि देश-नादी जिस्मे कीसने दीक्षा कीसीने श्रावक व्रत लेके अपने अपने स्थान गये ।

चित्त प्रधान व्याख्यान श्रवण करके बड़ा आनंदीत हुवा और गुरू महाराजके पास श्रावकके १२ व्रत धारण किये । कितनेक रोज रेहनेपर प्रदेशी राजाका कार्य होजानेसे जयशत्रु राज प्रेमदर्शक भेटणा तैयार कर चित्त प्रधानको कार्य हो जानेका समाचार कहेके वह भेटणा देके रजा देता हुवा । चित्त प्रधान रवानेकि तैयार करके भगवान केशीश्रमणके पासमे आया अपने रवाने होनेका अभिप्राय दर्शाते हुवे भगवानसे श्वेताम्बिका पधारनेकि विनती करी कि हे भगवान आप श्वेताम्बिका पधारों इसपर गुरु महाराजने पुर्ण ध्यान न दीया तब दूसरी तीसरीवार और भी विनती करी ! तब केशी भगवान बोले कि हे चित्त प्रधान तु जानता है कि एक अच्छा सुन्दर बन हो और उन्हीमे मधुर फलादि पाणी भी हो परन्तु उन्ही वनके अन्दर एक पारधी रेहता हो तो वनचर या खेचर जानवर आशक्ता है ? नही आवे, इसी माफोक तुमारे श्वेताम्बिका नगरी अच्छी साध्वादिके आने योग्य है परन्तु वहा नास्तिक प्रदेशी राजा पारधि तुल्य है वास्ते साधुवोंका आना केसे बन शक्ता है ।

नम्रतापूर्वक चित्त प्रधान बोला कि हे भगवान आपकों प्रदेशी राजासे क्या मतलब है श्वेताम्बिका नगरीमें बहुतसे लौक धनाढ्य बसते है और बडेही श्रद्धावान है हे भगवान आप पधारो आपकों बहुतसा असानपान खादीम स्वादिम वस्त्र पात्र पाट पटला

शय्या सथाराकि आमन्त्रण करके वेहारावेंगे और आपकि बहुत सेवा भक्ति करेगे तो फिर आपको प्रदेशी राजासे क्या करना है हे भगवान आपके पधारनेपर बहुत ही उपकार होगा कारण यहाके लोग बडे ही भद्रीक प्रकृतिवाले है वास्ते आवश्य पधारों ऐसी आग्रेपूर्वक विनतिको श्रवण करते हूवे भगवान केशीश्रमणने फरमाया कि हे चित्त अवसर जाना जायगा । इतना केहेनेपर प्रधानजीको उमेद हो गइ कि गुरु महाराज आवश्य पधारेंगे ।

चित्तप्रधान सावत्थीसे रवाना होके श्वेताम्बिका आते ही पेहला वनपालकके पासे जाके केह दीया कि स्वल्पही कालमे यहा पर पार्श्वनाथ सतानीये केशीश्रमण पधारेगे उन्होंको मकान पाट पाटला आदिक सत्कार पूर्व देना और अच्छी तरहेसे सेवा भक्ति करना जब महात्मा यहा पर विराजमान होजावे तब तुम हमारे पास आके हमको खबर दे देना इत्यादि ।

चित्त प्रधान अपने स्थानपर आके रस्तेका श्रम दुर कर राजा प्रदेशीके पास जाके नम्रतापूर्व भेटणा देके सर्व समाचारोंसे राजाको सतुष्ट कीया ।

यहा केशीश्रमण भगवान अपने शिष्य मडलसे विहार करते २ श्वेताम्बिका नगरी पधार गये । वनपालकने महात्मावोंको देखतों ही बडा ही आदर सत्कारसे वन्दन नमस्कार करके उतरनेका स्थान और पाटपाटलादिसे भक्ति करके फिर नगरमे जहा चित प्रधान रहेते थे वहा आके हर्ष वदनसे वधाइ देताहुवा की हैं प्रधानजी जिन महा पुरुषोंकि आप रहा देख रहे थे वेही भगवान्

उद्यानमे पधार गये है उन्होंको मकान पाटपाटला शय्या संथारा देके मैं आपके पास आया हूं।

चित्त प्रधान आनन्दीत चित्तसे वनपालककों वधाइदेके नगर निवासीयोंको खबर कर दी उसी समय हजारों लोकोंकि साथमें प्रधानजी केशीश्रमणजी महाराजकों वन्दन करनेको आये भक्ति पूर्व वन्दन कर धर्मदेशना सुनी मुनियोंको गौचरी आदिसे खुब सुख साता उपजाई। श्वेतांविका नगरीमें आनंद मंगल वर्त राहा था।

एक समय चित्त प्रधान गुरू महाराजसे अर्ज करी कि हे भगवान आप हमारे प्रदेशी राजाकों धर्म सुनावों। मुझे खातरी है कि आपका प्रभाव शाली व्याख्यान श्रवण करनेसे प्रदेशी राजा अवश्य आपका पवित्र धर्मकों स्वीकार करेगा?

हे चित्त प्रधान च्यार प्रकारके जीव धर्म सुनाने लायक नहीं होते है यथा-(१) साधु मुनिराज आते है ऐसा सुनके सामने न जाता हो (२) मुनिराज उद्यानमें आ जाने पर भी वहां जाके वन्दन न करता हो (३) मुनिराज अपने घर पर आ जाने पर भी वन्दन भक्ति न करता हो (४) मुनिराज रस्तेमें सामने मील जाने पर भी वन्दन भक्ति न करता हो। हे चित्त तुमारे प्रदेशी राजामें च्यारों बोल पाते हे अर्थात् प्रदेशी राजा हमारे पास ही नहीं आवे तो मैं धर्म कैसे सुना सक्ता हूं।

चित्त प्रधान बोला कि हे भगवान् हमारे वहां कम्बोज देशके च्यार अश्व आये हैं उन्हीकों फीरानेके हेतुसे मैं प्रदेशी राजाकों आपके पास ले आऊंगा फीर आपके मनमाना धर्म प्रदेशी

राजाकों सुनाइये । इतना केहके वन्दन कर चित्त प्रधान अपने स्थान गया ।

एक समय वह च्यार अश्वोंसे रथ तैयार कर जंगलमें घूमनेके नामसे राजा प्रदेशीकों चित्त जंगलमें ले आया इधर उधर रथकों फीराते बहुत टैम हो जानेसे राजाका जीव घबराने लग गया, तब प्रधानसे राजाने कहा कि हे चित्त रथको पीछा फीरालों धूपसे मेरा जीव घबराता है अगर यहा नजीकमें शीतल छाया हो तो वहापर चलों इतनेमें चित्त प्रधान बोला महाराज यह नजिकमें अपना उद्यान है वहा पर अच्छी शीतल छाया है । प्रदेशी राजाने कहा कि एसा हो तों वहा ही चलो । इतनेमें प्रधानजीने रथकों सीधा ही जहा पर केशीश्रमण भग वान विराजते थे । उन्होंके पासमें प्रदेशी राजाकों ले आये एक मकानमें राजाको ठेरा दिया । श्रम दुर हो जानेपर राजाने दृष्टि पसार किया तो उदर केशीश्रमण भगवान विस्तारवाली परिषदा को धर्मदेशना दे रहे थे । उन्होंको देखके प्रदेशी राजा बोला हे चित्त यह जड मूढ कोन है और इन्हों कि सेवा करनेवाले इतने जडमूढ काहासे एकत्र हुवे है ।

चित प्रधान बोला हे नराधिप यह जैन मुनि है । धर्म देशना दे रहे है । इन्होंकि मान्यता है कि जीव और काया भिन्न भिन्न है । इसपर प्रदेशी राजा बोला हे चित्त क्या यह साधु अन्छे लिखे पढे है अपनेकों वहा पर जाने योग्य है अर्थात् अपने प्रश्न करे तो वह उत्तर देवेगा ।

चित्त प्रधन बोला हे नरेश्वर ये मुनि अच्छे ज्ञाता है वहां पर जाने योग्य है आपके प्रश्नोंका उत्तर ठीक तौर पर दे देंगे वास्ते आप आवश्य पधारों इतना सुननेपर राजा प्रदेशी चित्त-प्रधानको साथमें लेकर केशीश्रमण भगवानके पासमें आया परन्तु प्रदेशी वन्दन नहीं करता हुवा मुनिके आगे खडा रहा ।

प्रदेशीराजा बोला हे स्वामिन् क्या आप जीव और शरीरकों अलग अलग मानते हो ?

केशीश्रमण बोले हे राजन् जैसे हासलके चोरानेवाला उन्मार्ग जाता है और उन्मार्गका ही रस्ता पूछता है इसी माफीक हे राजन् तूं भी हमारा हासल चौराते हुवे वेअदबीसे प्रश्न करते है । हे महीपति पेहला आपके दीलमें यह विचार हुवा था कि यह कोण झडमूंड है और कौन झडमूंड इन्होंकी सेवा करते हैं । इतनेमें राजा प्रदेशी विस्मत होते हुवे पुच्छा कि हे भगवान आपने मेरे मनकी वात कैसे जानी ? केशीश्रमण बोले कि हे राजन् जैन शासनके अन्दर पांच प्रकारके ज्ञान है यथा—

(१) **मतिज्ञान**—मगजसे शक्तियों द्वारा ज्ञान होना ।

(२) **श्रुतिज्ञान**—श्रवण करनेसे ज्ञान होना ।

(३) **अवधिज्ञान**—मर्यादायुक्त क्षेत्र पदार्थोका देखना ।

(४) **मनःपर्यवज्ञान**—अढाई द्विपके संज्ञी जीवोंके मनका भाव जानना ।

(५) **केवलज्ञान**—सर्व पदार्थोंकों हस्ताम्बलकि माफीक देखना और जानना ।

इसमें मुझे केवल ज्ञान छोडके शेष च्यार ज्ञान है उस्मे मन पर्यव ज्ञानद्वार मे तुमारे मनकि सर्व वार्तो जानी है।

राजा प्रदेशी बोला हे भगवान मैं यहा पर बेठु ?

केशीश्रमण बोले हे राजन् यह बगेचा तुमारा ही है।

राजा प्रदेशीके दीलमे यहतो निश्चय हो गया कि यह कोइ चमत्कारी महात्मा है अब ठीक स्थान पर बेठके राजा बोला कि हे भगवान आपकि यह श्रद्धा प्रीटी प्रज्ञा और मान्यता है कि जीव और शरीर अलग अलग है ?

हे राजन् हमारी श्रद्धा यावत् मान्यता हे कि जीव और शरीर जुदे जुदे है और इस बातको हम ठीक तौर पर सिद्ध कर शक्ते है।

प्रदेशी राजा बोला कि अगर आपकी यह ही श्रद्धा मान्यता हो तो मैं आपसे कुच्छ प्रश्न करना चाहता हु ?

हे राजन् जेसी आपकी मरजी हो ऐसा ही करिये।

(१) प्रश्न—हे भगवान मेरी दादीजी हमेशोंकि लिये धर्म पालन करती थी और उन्होंकी मान्यता भी थी कि जीव और शरीर जुदा जुदा है हो आपके मान्यतासे धर्म करनेवाले देव लोकमें देवता होना चाहिये और मेरे दादजी भी देवतोंमें ही गये होगे—अगर मेरे दादजी देवलोकसे आके मुझे केहे कि हे वत्स मैं धर्म करके देवावतार लिया हू वास्ते तु भी इस अधर्मको छोडके धर्मकर ताके दु खसे बचके देवतावोंका सुख मीलेगा हे महाराज एसा मुझे आके केहदेवें तों मैं आपका कहना सच समझु कि हमारे दादीजीका शरीरतों यहा पर रहा और जीव देवतोंमें गया इस लिये जीव रीर अलग अलग है अगर मेरे दादीजी एसा न कहे तों मेरे

माना हुवा ठीक ही है कि जीव और शरीर एक ही है अर्थात्
पांचतत्वसे यह पुतला बना हुवा है जब पांचोतत्व अपने २ रूपमें
मील जाते है तब पुतला विनास हो जाता है यह मेरी मानता
ठीक है ?

(उत्तर) हे राजन् कोई मनुष्य स्नान कर चंदनादि सुगन्ध
पदार्थसे शरीर लेपन करके देव पूजन करनेको जा रहा हैं, रस्तेमें
कोई पाखाना (टटी) में उभा हुवा मनुष्य उन्हीं देव पूजन कर-
नेकों जाते हुवे मनुष्यकों पाखानेमें वोलावे तो जा शक्ता है ?
नही भगवान इस दुर्गन्धके स्थानमें वह केसे जावे अर्थात् नही
जावे । हे राजन् वह दुर्गन्धके स्थान पर जाना नही इच्छता है तों
देवतावोंतों परम् आनंदमें उत्तम पदार्थोंके भोग विलासमें मग्न हो
रहे है इन्ही मनुष्य लोक कि दुर्गन्ध ४००—५०० योजन उर्ध्व
जाती है वास्ते देवता मनुष्य लोकमें आना नही चाहते है। हे राजन्
और भी सुन देवता मनुष्य लोकमें आनेकि अभिलापा करते भी
च्यार कारणोंसे नही आशक्ते है यथा—

(१) तत्कालके उत्पन्न हुवे देवतावोंके मनुष्योंका संबंध
छुट जाता है (विस्मृत) और वहां देव देवीयोंसे नया संबन्ध हो
जाते है इसीसे देवता आ नही शक्ता है ।

(२) तत्कालका उत्पन्न हुवा देवता—देवता संबन्धी दिव्य
मनोहर काम भोगोंमे मुच्छींत हो जाते है वास्ते यहांके सडन
पडन निध्वंसन काम भोगोंका तीरस्कार करते है वास्ते आ नही
शक्ता है ।

(३) तत्कालका उत्पन्न हुवा देवतावोंकि आज्ञाकारी देव देवीयों एक नाटिक करते हे उन्हीकों देखनेमे लग जाते है वह सुखपूर्वक देखनेवालोंको ज्ञात होता है कि महुर्त मात्रका नाटिक है परन्तु यहा २००० वर्ष क्षीण हो जाते है वास्ते देवता आ नही शक्ते है।

(४) तत्कालके उत्पन्न हुवा देवतावों मनुष्य लोकमे आना चाहे परन्तु मृत्यु लोक कि दुर्गंध ४००-५०० योजन ऊर्ध्व जाती है वास्ते दुर्गंधके मारे देवता यहा पर आ नही शक्ता है।

वास्ते हे राजन् तू इस बातकों स्वीकार करले की जीव और शरीर भिन्न भिन्न है।

(२) प्रश्न हे भगवान् आपने यह युक्ति तो ठीक मीलाई परतु मेरे दादाजी मेरे माफीक बडे ही अधर्मी थे लोहीसे हाथ हमेशों लीप्त ही रेहते थे जीव मारनेमे कीसी प्रकार कि घ्रणा नही लाते थे वह आपकि मान्यता माफीकतों नरकमे ही गये होगे हे भगवान् अगर मेरे दादाजी नरकसे आके मुझे केहदे कि हे वत्स मेने बहुतसे अधर्म किये थे वास्ते नरकमे दु:ख देख रहा हु परन्तु अब तुम अधर्म न करना अगर अधर्म करोंगे तों मेरे माफीक तुम भी नरकमें दु:ख देखोंगे एसा आके मेरा दादजी मुझे कहेतों में आपकि बातको सच मानु नही तों मेरी मानी ठीक है ?

(उत्तर) हे राजन् आपकि परम वल्लभा सुरिकन्ता नामकि राणी है उन्होंके साथ कोई लपट पुरुष काम भोग सेवन करता होतो तु उस लपटकों क्या दंड करेगा ? हे भगवान् उस लपटको में मारू पीटू कैद करू। हे राजन् अगर वह लपट कहे कि मुजे क्षण मात्र छोडतों में मेरे ... मीक आउ तो तुम

उन्हीं लंपटकों छोड दोगे ? नहीं भगवान् एसे अकृत करनेवालोंको केसे छोडा जावे अर्थात् एक क्षण मात्र भी नहीं छोडु। इसी माफीक हे राजन् नारकिके नैरियोंकों भी क्षण मात्र यहां आनेको नहीं छोडा जाता है और भी सुनो नारकीके नैरिये यहां आना चाहते है तद्यपि च्यार कारणोंसे नहीं आ शक्ते है यथा—

(१) तत्काल उत्पन्न हुवा नारकीके महावेदनिय कर्मक्षय नहीं हुवे वास्ते आना चाहते हुवे भी आ नहीं शक्ते है अर्थात् वहां वेदना भोगवनी ही पडती है।

(२) तत्कालोत्पन्न हूवे नारकी परमाधामी देवतावोंके आधिन हो रहे है वह देवता एक क्षीण मात्र भी उन नारकीकों विसरामा नहीं लेने देते है वास्ते नहीं आ शक्ते है।

(३) तत्कालोत्पन्न हूवे नारकी किये हुवे नरक योग्य कर्म पूर्ण भोगव नहीं शक्या वास्ते नारकी आ नही शक्ते है।

(४) नारकीका आयुष्य बन्धा हुवा है वह पुरणक्षय नहीं कीया है वास्ते आना चाहते हुवे भी नारकीके नेरिया यहां पर आ नहीं शक्ते है।

इस वास्ते हे राजन् तू मानले कि जीव और काया भिन्न भिन्न है।

(३) प्रश्न-हे भगवन् एक समय मैं सिहासनपर वेठा था उन्ही समय कोतवाल एक चौरकों पकडके मेरे पास लाया मैंने उसी जीवते हुवे चौरको एक लोहा कि मजबुत कोठीमें प्रवेश कर उपरसे ढकणा बन्ध कर दिया और एसी मजबूत कोठीकों कर दी कि वायुकायकों भी उसी कोठीमे आने जानेका च्छेद्र नही

रहा फीर कितनेक समय होजानेसे उन्ही कोटीको इदर उदर ठीक तलास करनेपर काही भी छेद्र न पाये कोठीकों खोलके देखा तो वह चौर मृत्यु प्राप्त दृष्टीगोचर हुवा तब म्हैने निश्चय कर लिया कि जीव और शरीर एक ही है क्युकि अगर जीव जुदा होता तों कोटीसे निकलने पर छेद्र अवश्य होता परन्तु छेद्र तो कोंइ भी देखा नहीं वास्ते हे भगवान् मेरा मानना ठीक है कि जीव काया एक ही है ?

(उत्तर) हे राजन यह तेरी कल्पना ठीक नहीं है कारण जीव तो अरूपी हैं और जीव कि गति भी अप्रतिहत अर्थात् किसी पदार्थसे जीवकी गति रूक नहीं शक्ती है अगर कोठीके छेद्र न होनेसे ही आपकी मति भ्रम हो गई हो तो सुनो । एक कुडागशाला अर्थात् गुप्त घरके अन्दर एक ढोल डाके सहित मनुष्यकों बेठाके उन्होंका सर्व दरवाजा और छेद्रोंकों बीलकुल बन्ध कर दे (जेसे आपने कोटीका छेद्र बन्ध किया था) फिर वह मनुष्य गुप्त घरमें ढोल मादल बजावे तो हे राजन् उन्ही बाजाकी आवाज बाहारके मनुष्य श्रवण कर शक्ते है ? हा भगवन् अच्छी तरहेसे सुन शक्ते है। हे राजन् वह शब्द अन्दरसे बाहार आये उन्होंसे गुप्त घरके कोइ छीद्र होता है ? नहीं भगवन् तो हे राजन् यह अष्ट स्पर्शवाले रूपी पीदगल अन्दरसे बाहार निकलनेमें छेद्र नहीं होते है तों जीव तों अरूपी है उन्होंके निकलनेसे तो छेद्र होने ही काहासे वास्ते हे प्रदेशी तु समझके मान ले के जीव और शरीर अलग अलग है।

(४) हे भगवन् एक समय कोतवाल एक चौरकों पकडके मेरे पास लाया म्हें उन्हीं चौरको मारके एक लोहाकी कोटीमें डाल

दिया और सर्व छेद्रको बन्ध कर दिये फीर कितनेक समयके बाद कोटीकों देखा तो एक भी छेद्र नहीं हूवा कोटीको खोलके देखा तो अन्दर हजारों जीव नये पेदा हो गये। हे भगवन् जब कोटीके छेद्र नहीं हुवे तो जीव काहासे आये इसी वास्ते मेरा ही मानना ठीक है कि जीव और काया एक ही हैं।

(उ) हे राजन् आपने अग्निमें तपाया हुवो एक लोहाका गोलेकों देखा है ? हां प्रभो मैंने देखा है। हे राजन् उन्हीं लोहोका गोलेके अन्दर अग्नि प्रवेश होती है ? हां दयाल प्रवेश होती है। हे राजन् क्या अग्नि प्रवेश होनेसे लोहाका गोलेके छेद्र ही होता है ? नहीं भगवन् छेद्र नहीं होता है। हे राजन् जब यह बादर अग्नि लोह गोलाके अन्दर प्रवेश हो जानेपर भी छेद्र नहीं हूवे तों जीव तो अरूपी सुक्षम है उन्हींको लोहाकी कोटीमें प्रवेश होते छेद्र काहाशे होवे वास्ते समझके मान ले जीव काया जुदी जुदी है।

(९) हे स्वामीन् आप यह बात मानते हो कि सर्व जीव अनन्त शक्तिवाले है ? हां राजन् सर्व जीव अनन्त शक्तिवान् है। तो हे भगवान एक युवक पुरुप जीतना वजन उठा शके इतनाही वजन वृद्ध क्युं नही उठा शक्ता है। अगर युवक और वृद्ध दोनों बरावर वजन उठा शके तो म्हें आपका केहना मानु, नही तो मेरा ही माना हुवा ठीक है ?

(उत्तर) हे महीपाल—जीवतों अनन्त शक्तिवान् है परन्तु कर्मरूपी औपधीसे वह शक्तियों दब रही है जब औपधी (कर्म) बीलकुल दूर हो जावेंगे तब अनन्त शक्ति अर्थात् आत्म वीर्य

प्रगट हो जायगा और आपका जो केहना है कि युवक और वृद्ध बराबर वजन क्यों नही उठा शक्ते है ? हे राजन् आप जानते है कि अगर कोई दो मनुष्य युवक बलवान बराबरके है जिसमें एकके पास नवी कावड मजबुत वास और रसी आदी सामग्री है और दुसरे मनुष्यके पास पुराणी कावड सडे हुवे वास और रसी आदि सामग्री है। हे राजन् वह दोनों पुरुष बराबर वजन उठा शक्ते है नही भगवान् वह बराबर केसे उठा शक्ते है कारण उन्होंके कावडमें तफावत है, हे राजन दोनों पुरुष बराबर होने पर कावडकि तफावत होनेसे बराबर वजन नही उठा शक्ते इसी माफक जीव तों बराबर शक्तीवाला है परन्तु कावड रुप शरीर सामग्रीमें युवक और वृद्धका तफावत है वास्ते वह बराबर वजन नही उठा शके। इस हेतुसे समझ लो राजन् कि जीव और काया अलग अलग है।

(९) प्रश्न हे भगवान् जीव सर्व सरखे मानते होतो जेसे एक युवक पुरुष बाणफेके इसी माफीक वृद्ध पुरुष बाणफेके तो मैं मानु कि जीव और काया अलग अलग है नहीं तों मेरा माना हुवा ही ठीक है ?

(उत्तर) हे राजन् दो पुरुष बराबर शक्ती वाले है जिसमे एकके पास बाण तीर धनुष्यादि नवी सामग्री है और दुसरे पुरुषके पास पूराणी सामग्री है तो दोनों पुरुष बरावर होनेपर क्या बाणको बराबर फेक सक्ता है ? नहीं भगवान्। क्या कारण ? सामग्री नवी पुराणीका ही कारण है ? हे राजन् इस हेतुसे समझो की युवक पुरुषके शरीर सहनन सामग्री नवी है वह बाण जोरसे फेक शक्ता है। और वृद्ध पुरुषके शरीर सहनन सामग्री पुराणी

होजानेसे इतना वेगसे बाण नहीं फेंक शक्ता है वास्ते समझके मानलोकि जीव और काया अलग अलग है।

(७) हे भगवान् एक समय कोतवाल जीवता हुवा चौरकों मेरे पास लाया, मैं उन्हीं जीवता हुवा चौरके दोय तीन च्यार पंच यावत् संख्याते खंड करके खंड खंडमें जीवकों देखने लगा परन्तु मेरे देखनेमें तों जीव कहीं भी नहीं आया तों मैं जीव और शरीरकों अलग अलग केशे मानु अर्थात् मेरा माना हुवा ही ठीक है ?

(उत्तर) हे राजन् कठीयाडोंका समुह एक समय एकत्र मीलके एक वनमें काष्ट लेनेकों गये थे वह सर्व एक स्थान पर स्नान मज्जन देव पूजन कर भोजन करके एक कठीयाडाकों कहा कि हम सब लोक काष्ट लेने कों जाते है और तुम यहा पर रहो यहां जों अग्नि है इन्हों कि सरक्षण करो और टैम पर रसोइ तैयार रखना अगर अग्नि वुज भी ज वे तों यह जो आरणकि लकडी है इन्होंसे अग्नि निकाल लेना। हम सब लोक काष्ट लावेगे उन्होंके अन्दरसे कुच्छ (थोडा थोडा) तुमकों भी देदेकें बराबर बना लेवेगे एसा कहेके सर्व लोक वनमें काष्ट लेनेको चले गये। बाद मे पीछे रहा हुवा कठीयाडा प्रमादसे उन्ही अग्निका संरक्षण कर नही शका। अग्नि वुज जाने पर आरणकि लकडीयों लाके उसके दोय तीन च्यार पंच यावत् संख्याते खंड करके देखा तो काही भी अग्नि नही मीली तब सर्व कठीयाडोंको असत्य समझता हुवा निरास होके बेठ गया। इतनेमें वह सब लोक काष्ट लेके आया और देखा तों अग्नि भी नही आरणकि लकडीयों भी सब टुटी हुइ पडी

है और वह कठीयाडा भी निरास हुवा बेठा है उन्होंसे पुच्छा तो सब वृतात कहा तब सर्व कठीयाडे कोपित होके बोले हे मुढ ? हे तुच्छ ? यह तुमने क्या कीया इत्यादि तीरस्कार कीया बाद मे वह सर्व कठीयाडे लकडी तत्त्वके जानकार ठीक क्रिया कर अग्निको प्रगट कर भोजनादिसे सुखी हुवे । उन्ही प्रथम कठीयाडेके माफीक हे मुढ प्रदेशी, हे तुच्छ प्रदेशी, तत्त्वसे अज्ञात हे प्रदेशी तु भी कठीयाडेकी माफीक करता है ।

हे भगवान् यह विस्तारवाली परिषदके अन्दर मेरा अपमान करना क्या आपके लिये योग्य है ?

हे प्रदेशी आप जानते है कि परिषद कितने प्रकारकी होती है ?

हां भगवन् मैं जानता हु कि परिषदा च्यार प्रकारकी होती है यथा (१) क्षत्रीयोंकी परिषदा (२) गाथापतियोंकी परिषदा (३) ब्राह्मणोंकी परिषदा (४) ऋषीयोंकी परिषदा।

हे प्रदेशी आप जानते हो कि इन्हीं च्यार प्रकारके परिषदाकी आसातना करनेवालोंको क्या दंड दीया जाता है ?

हां भगवन् मैं जानता हु कि आसातना करनेवालोंको दंड

(१) क्षत्रीयोंकि परीषदाकी आसातना करनेवालोंको शुली फांसी कैद आदिका दंड दीया जाता है ।

(२) गाथापतियोंकि परिषदाकी आसातना करनेसे लकडी शास्त्र हस्त पगेत्यादिका दंड दिया जाता है ।

(३) ब्राह्मणोंकि परिषदाकि आसातना करनेसे आक्रोष वचन आदिसे तिरस्कार किया जाता है ।

(४) ऋषियोंकि परिपदाकि आसातना करनेसे-मुंड तुच्छ आदि शब्दोंका दंड करते है हे प्रदेशी आप जानते हुवे ऋषियोंकि आसातना करते हो और दंड मीलने पर अपके अपमानका दावा करते हो अर्थात् हे राजन् आप जानते हुवे ही मेरेसे प्रतिकुल प्रश्न करने है यह बात केशीश्रमण मनःपर्यव ज्ञानसे प्रदेशी राजाके मनकी वातकों जाणी थी कि प्रदेशी राजा समझ जाने पर भी प्रतिकुल प्रश्न करते है। इस लिये मुंढ तुच्छ शब्दोंकि सजा दी थी।

हे भगवान् म्हे आपका प्रथम ही व्याख्यासे समझ गया था परन्तु प्रतिकुल प्रश्न कीये वगेर मेरे और मेरा पक्ष वालोंको विशेष ज्ञान मील नही शक्ता है वास्ते विशेष ज्ञान प्राप्तिके इरादासे ही मेने यह प्रतिकुल प्रश्न कीये है।

हे राजन् आप जानेते है कि लौकमे व्यवहारीयें कितने प्रकारके होते है ?

हां भगवान् म्हे जानता हु कि व्यवहारींये च्यार प्रकारके होते है यथा-

(१) जेसे कीसी साहुकारका रुपिया लेना है वह मागनेकों जाने पर देनदार रूपीया देवे और साहुकारका आदर सत्कार करे वह प्रथम व्यवहारीया है (२) मागने पर रुपया दे देवे परन्तु सत्कार न करे यह भी दुसरे व्यवहारीया ही है (३) मागनेपर रुपीया न देवे परन्तु नम्रतापूर्वक सत्कार करके कहे की म्हे अमुक मुदतमें आपके रूपीया सूत सहीत देउगा वह तीसरा व्यवहारीया है

(४) मागनेपर रूपीया न देवे और सत्कार भी न करे और उल्टा तीरस्कार करे वह अव्यवहारीया है।

हे प्रदेशी आप भी इन्ही च्यार व्यवहारीयोंके अन्दर दुसरा व्यवहारीया हो कारण कि आप मनमें तों ठीक समझ गये हो। परन्तु बाहरमें आदर सत्कार नही कर शक्ते हो हे प्रदेशी जब मनमे समझ ही गये तों अब लज्जा किस बातकि है खुल्मखुला धर्मकों स्वीकार क्यों न कर लेते हो।

(८) प्रश्न—हे भगवन् आप हस्ताम्बलकि माफीक प्रत्यक्षमे मुझे जीव और शरीर अलग अलग बतलादो तों म्हे अंबी आपका कहना मान शक्ता हु नही तों मेरा माना हुवा ही धर्म अच्छा है?

(उत्तर) केशीश्रमण उत्तर दे रहे थे इतनेमे एक वृक्षके पत्र जोरसे चलने लगे तब केशीस्वामि प्रदेशी राजासे पुच्छा कि हे प्रदेशी यह वृक्षके पत्र क्यु चल रहे है तब प्रदेशी बोला कि हे भगवान् वायुकायके प्रयोगसे वृक्षका पत्र चल रहे है। केशी स्वामिने काहा, हे प्रदेशी वायुकायाकों कोइ अम्बले जीतनी वायुकाय दीखा शक्ता है प्रदेशीने काहा नही भगवन् वायुकाय बहुत सूक्षम है। केशी स्वामिने काहा हे प्रदेशी च्यार शरीर संयुक्त वायुकाया भी नही दीखा शके तों अरूपी जीवकों हस्ताम्बल कि माफीक कैसे बना शके हे प्रदेशी छदमस्थ जीवों दश पदार्थोंको नही देख शक्ते है यथा—

(१) धर्मास्तिकाय जो जीव पुद्गलोंको चलन साहीता देती है

(२) अधर्मास्तिकाय जो जीव पुद्गलोंको स्थिर होनेके साहिता देती है।

(३) आकशस्तिकाय जों जीवाजीवकों स्थान देती है।

(४) शरीर रहीत जीव को नही देख शक्ता है ?

(५) परमाणु पौदगल कोनही देख शक्ता है ?

(६) शब्दके पौदगल कोनही देख शक्ता है ?

(७) गन्धके पौदगल कोनही देख शक्ता है ?

(८) यह भव्व है या अभव्व है ,,

(९) इसी भवमें मोक्ष जावेगा या नही जावेगा ?

(१०) यह जीव तीर्थंकर होगा या नही होगा ?

इन्हीं १० बोलोंको छदमस्थ नहीं जाने, परन्तु केवली भगवान् जान शक्ते है वास्ते हे प्रदेशी तु समझ ले जीव और शरीर अलग अलग है।

(९) पश्न-हे भगवान आपके शासनमें सर्व जीव एक ही सारखा-बराबर माने गये है तो यह प्रत्यक्ष लोकमें हस्ती महाकाय वाला होता है जिन्होंके महारम्भ क्रिय-कर्म-आश्रव देखनेमें आते है और कुंथवेका स्वल्प शरीर है और उन्होंके स्वल्पारम्भ किया-कर्म-अश्रव देखनेमें आते है तो फीर जीव बराबर केसे माना जावे वास्ते मेरा माना हुवा ही तत्व ठीक है ?

(उ०) हे प्रदेश हस्ती और कुंथवेका जीवतों सदृश ही है परन्तु जीवोंके पुन्य पापकी प्रकृतियों भिन्न भिन्न होनेसे शरीर न्युनाधिक होता है जेसेकि एक कुडागशाला-गुप्तघर होता है जिन्होंके अन्दर एक दीपक कर दिया जाय और उन्होंके उपर एक विस्तारवाला ढक दे देनेपर उन्ही दीपकका प्रकाश उन्हीं ढकके अन्दर ही पडेगा और उन्हीसे कुच्छ कम ढक होगा तो

प्रकाश भी कम पडेगा और उन्हीसे ही कम ढक होगा तो प्रकाश भी कम पडेगा अर्थात् जीतना ढक होगा उतना ही प्रकाश पडेगा तात्पर्य यह हुवा कि। दीपकमें प्रकाश है परन्तु उसके ढक होगा उतना ही विस्तारमें प्रकाश पडेगा दीपक माफीक जीव है और ढक माफीक नाम कर्मोदय शरीर मीला है जीतना शरीर होगा उतनेमें जीव समावेस हो जायगा इसीमें–कर्मोंके अनुस्वार शरीरकी ही न्युनाधिकता है वास्ते समझके मान लों कि जीव काय अलग अलग है।

(१०) प्रश्न–हे भगवान् आपकी युक्तियों बहूत ही आति है और युक्तिपूर्वक आपका केहना ही सत्य है परन्तु मेरे बाप दादोंसे चले आये धर्मको मैं किस्तरेसे त्यागन करू मुझे लोक क्या कहेगा ?

(उत्तर) हे राजन्–आपने लोहा वाणीयाका दृष्टात सुना है ? नही भगवान मेने लोहावाणीयाका द्रष्टात नहीं सुना है। हे राजन् लों अब सुनों। एक नगरसे बहुतसे वेपारी लोक द्रव्यार्थी गाडोंमें कीरयाणों लेके विदेशके रवाने हुवे जिस्मे एक लोहा वाणीया भी था " आगे चलते एक लोहाकि खान आई तब सर्व वैपारी लोकों लोहाकों ले लीये, आगे चलने पर एक तांबाकि खान आइ सब लोकोंने लोहाकों छोडके तांबाको ले लीया और अपने साथ चलनेवाला" लोहा वाणीयाकों, भी कहे दीया कि हे भाई यह तांबा लोहासे अधिक मूल्य वाला है। वास्ते लोहाको छोडके तुम भी इस तांबाको ले लों। लोहा वाणीयाने उत्तर दीया कि एकको छोडे और दूसरेको ग्रहन कोन करे खेर। आगे चलने पर चान्दीकी

खानआइ तो सब लोकोंने तांबांको छोडके चान्दी लेली और येहलाकि माफीक लोहाणीयानेतों लोहा ही रखा आगे चलनेपर सुवर्ण लेलीया लोहावाणीयाने तों अपनी ही सत्यताकों कायम रखी, आगे चलते हुवे एक रत्नोंकि खान आइ सब जीणोंने सुवर्णको छोड़के रत्न ग्रहन कर लिया और हित बुद्धिसे । लोहावाणीयाकों काहा हे भाइ अपना हठको छोड दों इस स्वल्प मूल्यवाला लोहाकों छोडके यह बहु मूल्य रत्नोंको ग्रहन करों अबीतो कुच्छ नहीं बीगडा है अपने सब बराबर हो जावेगे तुम रत्नोंकों ग्रहन करलों उत्तरमे लोहावाणीयाने कहा कि बड़ी हासी कि बात है कि तुमने कितने स्थान पर पलटा पलटी करी है तो क्या मुजे आप एसा ही समझ लिया नही? नही? कबी नही? म्हे आप कि माफीक नही हू मैंने तो जो लेलीया वह ही लेलीया चाहे कम मूल्य हो चाहे ज्यादामूल्य हों म्हेतो अब लीया हुवा कबी छोड़नेवाला नहीं हू। बस सब लोक अपने अपने घर पर आये रत्नोंवालेतो एकाद रत्नकों वेचके बड़े भारी प्रसादके अन्दर अनेक प्रकारके सुखोंको विलसने लग गये और यह लोहा वाणीया दारीद्री ही रेह गये अब दुसरोंका सुख देखके बहुत पश्चाताप झुरापा करने लगा परन्तु अब क्या होता है। हे राजन् तु भी लोहावाणीयाका साथी हो रहा है परन्तु याद रखीये फीर लोहावाणीयाकी माफ़ीक तेरेकों भी पश्चाताप न करना पडे इसकों ठीक विचारलेना?

प्रदेशी राजा बोला कि हे भगवान् आपके जेसे महान्र पुरुषोंका समागम होनेपर कीसी जीवोंकों पश्चातप करनेका आवकाश ही नहीं रेहेता है तो मेरे पर तो आपने

च्चडी ही कृपा करी है अब इस भवमें तो क्या परन्तु भवान्तरमें भी मेरे पश्चाताप करनेका काम नही रहा है। हे भगवान् में अच्छी तरहसे समझ गयाहु कि आपका फरमान सत्य है जेसे आपने फरमाया वेसे ही जीव और काया अलग अलग हैं यह बात मेरे ठीक ठीक समझमें आगइ है अब तो म्है आपकि वाणीका प्यासा हो राहा हू वास्ते कृपा कर केवली परूपीत धर्म मुझे सुनावे।
केशीश्रमण भगवानने विचित्र प्रकारकी धर्मदेशना देना प्रारंभ किया। हे राजन् तीर्थंकरोंने मोक्षका दरवाजे च्यार बतलाये है यथा दान धर्म, शीलधर्म, तपश्चर्यधर्म, भावधर्म जिस्मे भी दान धर्मको प्रधान बतलानेके लिये स्वयं तीर्थंकरोने प्रथम वर्षी दान देकेही योगारंभ धारण कीया है जब मनुष्योंके सूनतारूपी हृदयके कमड खुल्ते हृदयमे उदारताका प्रवेश होता है तब दुसरे अनेक गुण स्वयही आ जाते है इत्यादि केहके फीर केहेते है कि हे राजन् भगवन्तोंने साधुधर्म और श्रावक धर्म यह दो प्रकारके धर्म अक्षय सुखका दातार बतलाये है इसपर खुब ही विस्तार हो शक्ता है परन्तु यहापर हम प्रश्नोत्तरका ही विषयको लिख रहे है वास्ते इतना ही कहना ठीक होगा कि केशीश्रमण भगवानने विचित्र देशना राजाको सुनाई।

प्रदेशी राजा धर्म देशना श्रवणकर हर्ष हृदयसे बोला कि हे भगवन् दीक्षा लेनेको ता म्है असमर्थ हु आप कृपाकर मुझे श्रावकके १२ व्रतोंकि दया करा दीजीये। तब केशीश्रमण भगवानने प्रदेशी राजाको सम्यक्त्व मूल व्रतोंका उच्चारण कराया।

प्रदेशी राजाने सविनय सम्यक्त्व मूल व्रतोंकों धारण कर अपने स्थानपर जानेको तैयार हूवे ।

केशीस्वामि बोले कि हे प्रदेशी राजा आप जानते हों कि आचार्य कितने प्रकारके होते है ?

हां भगवन् म्है जानता हु आचार्य तीन प्रकारके होते है (१) कलाचार्य (२) शिल्पाचार्य (३) धर्माचार्य ।

हे राजन् इन्ही तीनों आचार्योंका बहु मान कैसे किये जाते है वह भी आप जानते है ।

हां भगवन् म्है जानता हु कि कलाचार्य और शिल्पाचार्यकों द्रव्य वस्त्र भूषण माला भोजनादिसे सत्कार किया जाता है और धर्माचार्यकों वन्दन नमस्कार सेवा भक्तिसे सत्कार किया जाता है ।

हे राजन् आप इस बातकों जानते हुवे मेरे साथमे प्रतिकुल वरताव कराथा उन्होंकों वगर· क्षमत्क्षामना और वन्दन किये ही जानेकि तैयार करली है ।

हे भगवान् म्है इन्हीं वातकों ठीक ठीक जानता हूं परन्तु यहां पर क्षमत्क्षमन और वन्दना आदि करनेसे म्है ही जानुगा परन्तु मेरा इरादा है कि कल सुर्योदय म्है मेरे अन्तेवर पुत्र उमराव और च्यार प्रकारकी शैन्य लेके वड़े ही उत्सवके साथ आपकों वन्दन करनेकों आउगा और वन्दन करूंगा ।

यह सुनके केशीश्रमण भगवानने मौन व्रतको ही स्वीकार कीया था क्युकी इस कार्यमें साधुवोंको हां या ना नहीं केहना एसा आचार है ।

दुसरे दिन राजा प्रदेशी अपने सर्व कुटुम्ब और च्यार प्रकार